नोट—पुष्पांकित पाठ कण्ठाग्र करने योग्य हैं।

साहित्य-संग्रह

पहला भाग

१—प्रार्थना

पितु मातु सहायक स्वामि सखा, तुमही इक नाथ हमारे हौ।
जिनके कछु और अधार नहीं, तिनके तुमही रखवारे हौ॥
सब भाँति सदा सुखदायक हौ, दुख-दुर्गुन-नासनहारे हौ।
प्रतिपाल करौ सगरे जग को, अतिसै करुना उर धारे हौ॥
भुलि हैं हम ही तुमको तुमतौ, हमरी सुधि नाहिं बिसारे हौ।
उपकारन को कछु अन्त नहीं, छिनही छिन जो बिस्तारे हौ॥
महाराज महा महिमा तुम्हरी, समझैं बिरले बुधिवारे हौ।
शुभ शान्तिनिकेतन प्रेमनिधे! मनमन्दिर के उजियारे हौ॥
यहि जीवन के तुम जीवन हौ, इन प्रानन के तुम प्यारे हौ।
तुम सो प्रभु पाय "प्रताप" हरी! किहि के अब और सहारे हौ॥

—प्रतापनारायन मिश्र

प्रश्न

१—उपर्युक्त प्रार्थना को याद करो और निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ—

अधार, रखवारे, सुधि, विरले, करुना और शान्तिनिकेतन।

२—निम्न-लिखित शब्दों के शुद्ध रूप लिखो—

अधार, रखवारे, नासनहारे, अतिसै, छिन और प्रानन।

३—प्रभु की महिमा बयान करो कि वे कैसे हैं।

४—निम्न-लिखित शब्दों के प्रकार बताओ (वर्गीकरणकरो)-

पितु, मातु, नाथ, तिनके, तुम्हरी।

२—कपटी मित्र

मगध देश में चम्पकवती नाम का एक वन है, वहाँ बहुत दिनों से एक हिरन और एक कौवा बड़े स्नेह से रहते थे। एक दिन हिरन इधर-उधर टहल रहा था। उसे एक सियार ने देखा। सियार ने विचारा, "अरे, इसके सुन्दर मांस को कैसे खायें? अच्छा चलो, पहले मेल करके विश्वास तो करावें।" ऐसा सोच उसके पास जाकर बोला, "मित्र अच्छे हो?" हिरन ने पूछा, "तुम कौन हो?" सियार बोला, "मैं क्षुद्र-बुद्धि नाम का सियार हूँ। इस वन में बिना किसी मित्र के, अकेला मरे की नाईं रहता हूँ। अब तुमको

मित्र पाके फिर से मेरा जन्म होगा। अब तो मैं सदा तुम्हारे साथ रहूँगा।" मृग ने कहा, "बहुत अच्छा।"

जब सूर्यनारायण अस्त हो गए, तो दोनों हिरन के कुञ्ज में गए। वहाँ चम्पा की डार पर हिरन का पुराना मित्र सुबुद्धि नाम का कौवा बैठा हुआ था। इन दोनों को देख, उसने पूछा, "यह कौन है?" हिरन ने कहा, "यह एक सियार है, हम लोगों से मिताई करने आया है।" कौवे ने कहा, "भाई, अकस्मात् आनेवाले के साथ मिताई नहीं की जाती। यह काम तुमने अच्छा नहीं किया।" इतना सुनते ही सियार लाल-लाल आँखें करके बोला, "जब तुम्हारी हिरन की पहली भेंट हुई थी, तब तुम भी ऐसे ही थे। तुम्हारे साथ कैसे आज तक प्रीति दिन-दिन बढ़ती जाती है? जैसे हिरन हमारा मित्र है, वैसे ही तुम भी।" हिरन ने कहा, "इस बकवाद से क्या मिलेगा? आओ सब कोई इकट्ठे चैन से बातचीत करें।" कौवा बोला, "अच्छा।" सवेरे सब इधर-उधर चले गए।

एक दिन सियार ने हिरन से चुपके से कहा, "भाई, इसी वन की एक ओर अनाज से भरापूरा एक खेत है, चलो तुम्हें दिखा दें।" मृग ने जो खेत देख लिया, तो नित वहीं जाकर अनाज चरा करता। एक दिन

किसान ने हिरन को देख लिया और जाल फैला दिया। हिरन जो आया, तो जाल में फँस गया और सोचने लगा, "इस काल की फाँसी ऐसे जाल से सिवाय मित्र के और कौन छुड़ा सकता है ?" इतने ही में सियार भी वहाँ आ पहुँचा और हिरन को देख, सोचने लगा, "मेरा छल सफल हो गया। अब मनोरथ भी पूरा होगा; क्योंकि जब यह काटा जायगा, तो इसकी बोटियाँ हमें खाने को मिलेंगी।" हिरन उसे देख खुशी से फूल गया और बोला, "भाई, मेरे बन्धन काट दो। मुझे छुड़ाओ। अब देर न करो।"

सियार ने जाल को बार-बार देखकर विचारा कि हिरन तो कठिन बन्धन में बँध गया है। वह बोला, "भाई, जाल ताँत का बना है। इसमें इतवार के दिन दाँत कैसे लगाऊँ ? तुम अपने मन में और कुछ मत समझना, सबेरे जो कहोगे, वही करूँगा।" जब साँझ हो गई और हिरन न आया, तो कौआ भी उसे ढूँढ़ता हुआ वहाँ पहुँचा और हिरन को उस दशा में देख के बोला, "भाई, यह क्या हुआ ?" हिरन ने कहा, "भाई, हित की बात न मानने का फल।" कौवे ने कहा, "वह सियार कहाँ है ?" हिरन बोला, "मेरे मांस के लालच में यहीं-कहीं होगा।" कौवे ने कहा, "मैंने तो तुमसे पहले ही कहा

था।" तब कौवा लम्बी साँस लेके बोला, "अरे दगा-बाज पापी, तूने यह क्या किया?" सबेरे किसान को लाठी लेकर उसी ठाँव आते देख, कौवे ने कहा, "भाई हिरन, तुम अपना पेट फुला और हाथ पैर ढीले कर, मरे ऐसे बन जाओ। जब मैं चिल्लाऊँ, तो तुम तुरन्त उठके भाग जाना।" कौवे की बात पर हिरन वैसा ही बन गया। किसान हिरन को मरा जान हँस के बोला, "अरे, यह तो आप ही मर गया।" इतना कह वह हिरन को खोल जाल बटोरने लगा। जब किसान कुछ दूर चला गया, तो कौवा चिल्लाया और हिरन झटपट उठके भाग गया। किसान ने लाठी चलाई, वह सियार के लगी और वह मर गया।

—सीताराम

प्रश्न

१—इस कहानी से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

२—सच्चे और कपटी मित्र में क्या अन्तर है?

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

स्नेह, मरे की नाईं, मिताई, अकस्मात्, भरापूरा, खुशी से फूल जाना, लम्बी साँस लेना और झटपट।

४—निम्न-लिखित वाक्य मे संज्ञाएँ बताओ—

जब सूर्यनारायण अस्त हो गए, तो दोनों हिरन के कुञ्ज में गए।

३—जन्मभूमि

१

जहाँ जन्म देता हमें है विधाता,
उसी ठौर में चित्त है मोद पाता।
जहाँ हैं हमारे पिता, बन्धु, माता,
उसी भूमि से है हमें सत्य नाता॥

२

जहाँ की मिली वायु है जीवदानी,
जहाँ का मिदा देह में अन्न-पानी।
भरी जीभ में है जहाँ की सुबानी,
वही जन्म की भूमि है भूमि-रानी॥

३

लगी धूल थी देह में जो हमारी,
कभी चित्त से हो सकेगी न न्यारी।
बनाती रही देह को जो निरोगी,
किसे धूल ऐसी सुहाती न होगी?

४

पिला दूध माता हमें पालती है,
हमारे सभी कष्ट भी टालती है।
उसी भाँति है जन्म की भू उदारा,
सदा संकटों में सुतों का सहारा॥

५

कहीं जा बसें चाहता जी यही है,
रहे सामने जन्म की जो मही है।
नहीं मूर्ति प्यारी कभी भूलती है,
छटा लोचनों में सदा झूलती है॥

६

जिसे जन्म की भूमि भाती नहीं है,
जिसे देश की याद आती नहीं है।
कृतघ्नी महा कौन ऐसा मिलेगा?
उसे देख जी क्या किसी का खिलेगा?

७

धनी हो बड़ा या बड़ा नामधारी,
नहीं है जिसे जन्म की भूमि प्यारी।
वृथा नीच ने मान-सम्पत्ति पाई,
बुरे के बढ़े से हुई क्या भलाई?

८

जिन्हें जन्म की भूमि का मान होगा,
उन्हें भाइयों का सदा ध्यान होगा।
दशा भाइयों की जिन्होंने न जानी,
कहेगा उन्हें कौन देशाभिमानी?

९

कई देश के हेतु जी खो चुके है,
अनेकों धनी निर्धनी हो चुके हैं।
कई बुद्धि ही से उसे हैं बढ़ाते,
यथाशक्ति हैं वे ऋणों को चुकाते ॥

१०

दयानाथ! ऐसी हमें बुद्धि दीजे,
दशा देश की देख छाती पसीजे।
दुखों से बचाते रहें देश प्यारा,
बनावें उसे सभ्य सत्कर्म द्वारा ॥

—कामताप्रसाद गुरु

प्रश्न

१—किस प्रकार हमारी जन्म-भूमि हमारी माता के तुल्य है?

२—इस पाठ में कृतघ्नी किनको कहा गया है?

३—अपनी जन्म-भूमि के प्रति हमारा क्या कर्तव्य है?

४—निम्न-लिखित पदों और शब्दों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—ऋण चुकाना, कृता, कृतघ्नी, नामधारी, निरा, नाता, देशाभिमानी और छाती पसीजना।

५—उपर्युक्त पाठ के छठे पद्य में जो-जो क्रियाएँ आई हैं, उनके नाम बताओ।

६—निम्न-लिखित शब्द किस प्रकार के हैं ?—जहाँ, दूध, भूमि, नाता और उन्हें ।

४—ध्रुव

उत्तानपाद नामक राजा के दो स्त्रियाँ थीं । एक का नाम सुनीति था और दूसरी का सुरुचि । सुरुचि राजा को बहुत प्यारी थी । उसके उत्तम नाम का एक लड़का था । सुनीति के भी ध्रुव नाम का एक लड़का था । एक रोज राजा सुरुचि के लड़के को गोद में बैठाकर खिला रहे थे । ध्रुव की भी राजा की गोद में बैठने की इच्छा हुई ; पर राजा ने उसे यह मान न दिया । यह देखकर बहुत अहंकार में आई हुई रानी सुरुचि ध्रुव से बोली—"बेटा, तू राजकुमार अवश्य है ; पर तूने मुझसे जन्म नहीं पाया । इस कारण तू राजा की गोद में बैठने के योग्य नहीं । तू बालक है, तुझे समझ नहीं, इसी कारण तुझे इतना बड़ा मनोरथ हुआ है ।"

सौतेली मा के ऐसे दुर्वचनों से छिदा हुआ ध्रुव रोता-रोता अपनी माता के पास गया । माता ने उसे गोद में उठा लिया ।

मुख से सौत के कठोर वचनों को सुना। इससे उसे बड़ा दुःख हुआ। वह आँखों में आँसू भरकर पुत्र से बोली—"बेटा, तेरी सौतेली मा ने जो कुछ कहा है, वह बुरा नहीं है; परन्तु तेरे दुःख दूर करने के लिए मैं ईश्वर के सिवा और किसी को समर्थ नहीं समझती।" इन वचनों को सुनकर, मानभङ्ग को न सहनेवाला वह बालक ५ वर्ष की अवस्था में ही, अपनी बुद्धि से निश्चय करके कल्याण के लिए, अपने पिता के नगर से बाहर निकल गया।

वहाँ उसे नारद मिले। उन्होंने ध्रुव से पीछे लौट जाने के लिए बहुत कुछ कहा और समझाया—"तुझे मान-अपमान का ख़्याल न करना चाहिए। करे भी, तो इस प्रकार असन्तुष्ट होने का कोई कारण नहीं; क्योंकि संसार में सुख-दुःख अपने क[र्म] से ही मिलता है। परन्तु तूने जो कुछ विचारा है, वह बहुत ही कठिन है।" यह सुनकर ध्रुव ने उत्तर दिया—"सुख और दुःख से सताए हुए मनुष्यों के लिए आपने जो शान्ति का मार्ग दिखलाया है, उस पर मेरे-जैसों से नहीं चला जा सकता। मैं तो जो पद तीनों लोकों में श्रेष्ठ हो और जिसे मेरे पिता आदि ने तथा औरों ने भी नहीं पाया हो, उसी पद [को] पाने की इच्छा करता हूँ।

इसलिए हे मुनिराज, मुझे आप उसी के लिए मार्ग बतलाएँ।"

इस पर प्रसन्न होकर दयालु नारदजी ने ध्रुव को उसका मार्ग दिखलाया। ऊँचे पद की प्राप्ति की ऊँची इच्छा में वह बराबर आगे बढ़ता गया। ईश्वर की कृपा से उसे वेद आदि सब विद्याओं का ज्ञान हो गया। उसका शारीरिक बल भी बराबर बढ़ता गया। सब प्रकार सुयोग्य हो जाने पर उसके पिता का राज्य भी उसी को मिला। राज्य पाकर उसने अपनी सुनीति आदि माताओं को बहुत ही सुख दिया। अपनी प्रजा का वह पिता की तरह पालन करने लगा। अनेक पराक्रम के कार्य किये और अन्त में उसने वह पद पाया, जो महात्माओं को भी नहीं मिलता। बड़प्पन चाहनेवाले सभी मनुष्यों को ध्रुव का चरित्र ध्यान में रखना चाहिए।

इस चरित्र से हम अनेक उपदेश ले सकते हैं। ध्रुव राजकुमार था। उसकी उम्र भी बहुत कम थी, तो भी कठोर वचन सुनते ही उसने पुरुषार्थ करने का निश्चय किया और इसी से अन्त में विजय पाई। इस कोमल और अल्प वयवाले राजकुमार ध्रुव के लिए यह विपत्ति बहुत बड़ी कही जा सकती है; पर

उसने इस भारी विपत्ति के द्वारा ही विजय प्राप्त करने का निश्चय किया। वह अपने अपमान से दुःखी होकर केवल अपनी माता के पास ही नहीं बैठ रहा। उसने ऊँचे उठने का उपाय पूछा। वह उपाय सीधा-सादा न था; किन्तु बहुत कष्ट देनेवाला और भयपूर्ण था। उसने सोचा कि मेरी हालत बहुत गिरी हुई है। यदि मैं उसे अधिक अच्छी करना चाहता हूँ, तो मुझे उसी के अनुरूप पूर्णरूप से परिश्रम भी करना चाहिए। इसके अनन्तर दृढ़ निश्चय करके वह अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए घर से बाहर निकल पड़ा। उसने इतना परिश्रम किया और ऐसी सफलता पाई कि आज तक ध्रुवतारे के साथ उसका 'ध्रुव' नाम अमर हो रहा है।

विचार करके देखने से मालूम होता है कि महापुरुष दुःख को इस प्रकार वश में कर लेते हैं कि वह उनका दास बन जाता है और उनके प्रिय यश को बढ़ाने में पूरी सहायता देता है।

—रामेश्वर शर्मा

प्रश्न

१—ध्रुव का मानभङ्ग कैसे हुआ?
२—ध्रुव के चरित्र से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है?

३—ध्रुव ने मानभङ्ग का उपाय क्या किया ?

४—ध्रुव शब्द के क्या-क्या अर्थ हैं, वे अर्थ ध्रुव के जीवन-कार्यों में कैसे घटते हैं ?

५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ लिखो और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—मानभङ्ग, मनोरथ, कल्याण और अमर।

६—क्या निम्न-लिखित शब्दसमूहों को हम वाक्य कह सकते हैं ?

मनोरथ, राजकुमार, सुख-दुःख और महापुरुष।

७—निम्न-लिखित वाक्यों में उद्देश्य और विधेय बताओ—

(१) सुरुचि राजा को बहुत प्यारी थी।

(२) ध्रुव का शारीरिक बल भी बराबर बढ़ता गया।

५—महानदी

शीतल स्वच्छ नीर ले सुन्दर
बता, कहाँ से आती है ?
इस जल्दी में महानदी तू
कहाँ घूमने जाती है ? ॥ १ ॥
कर्ण-प्रिय "कलकल" सुखदायी
गीत मनोहर गाती है।

अपने तट के ग्राम्य जनों का
मानों चित्त चुराती है ॥ २ ॥
उज्ज्वल तेरा रूप देखकर
मोद हुआ है मुझे बड़ा।
नेत्र-प्रिय सब दृश्य मनोहर
देख रहा हूँ खड़ा-खड़ा ॥ ३ ॥
छोटी-छोटी भँवरें पड़तीं
घूम-घूम रह जाती हैं।
चूम-चूम मेरे पैरों को
लहरें प्रेम दिखाती हैं ॥ ४ ॥
चढ़े नाव तव वक्षःस्थल में
धीवर मार रहे हैं मीन।
बड़ी दयावाली तू उनको
करती कभी न उदर-विलीन ॥ ५ ॥
तेरा विस्तृत विषम पाट है
चौड़ा झीलों से भारी।
अहा! किनारे बिछी बालु की
शीतल शय्या सुखकारी ॥ ६ ॥
नित्य तट-स्थित ग्राम्य जनों को
पान कराकर सुन्दर नीर।
स्वस्थ सदा तू उनको रखती

हरके उनकी सब दुख पीर ॥ ७ ॥

ग्रीषम के अति भीषम तप से
सूख ताल जब जाते हैं।
अन्य ग्राम-वासीगण तब तो
तव शरणागत आते हैं ॥ ८ ॥

करती है तू नित हम सबका
सभी प्रकार बड़ा उपकार।
तेरे इस ऋण से न हमारा
हो सकता कदापि उद्धार ॥ ९ ॥

नहीं शक्ति है हममें तेरे
दर्शाने की चरित विचित्र।
करके स्नान-मात्र ही तुझमें
हो जाते हैं लोग पवित्र ॥ १० ॥

शाम सवेरे तेरे तट पर
जो जन नित्य विचरते हैं।
शीतल-शुद्ध वायु-सेवन से
दिन भर का श्रम हरते हैं ॥ ११ ॥

नृत्य दिखाती, गान सुनाती
तू आगे को जाती है।
बता कहाँ को जाती है तू
लौट नहीं क्यों आती है ? ॥ १२ ॥

अनुपम तेरा रूप देखकर
नेत्र प्राण भर जाते हैं।
बतलाने को कविता द्वारा
शब्द न मुझको आते हैं॥ १३॥
नगर-पर्वतों को उजाड़ती
उग्र रूप धारण करके।
बता! बता! तू कहाँ दौड़ती
मन में मोद अमित भरके॥ १४॥

—मुरलीधर पाण्डेय

प्रश्न

१—महानदी कहाँ है? उसका कुछ वर्णन करो।
२—निम्न-लिखित पदों और शब्दों के अर्थ बताओ और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—चित्त चुराना, उज्ज्वल, वक्षःस्थल, विषम, पाट, अमित और उग्र।
३—निम्न-लिखित वाक्यों में विधेय की पूर्ति करो—
(१) तेरा पाट —।
(२) तेरा उज्ज्वल रूप देखकर —।
४—नीचे के वाक्यों में उद्देश्य की पूर्ति करो—
(१) —कहाँ से आती है?
(२) —पवित्र हो जाते हैं।

६—विद्या

किसी वस्तु का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करना ही विद्या है। विद्या पढ़ने से मनुष्य के हृदय में प्रकाश हो जाता है। बिना विद्या के हृदय का अन्धकार दूर नहीं होता। जिस तरह हम अँधेरे में कुछ देख नहीं सकते, उसी तरह बिना विद्या के कुछ सोच भी नहीं सकते। लोगों का यह कहना बहुत ठीक है कि विद्वान् के चार आँखें होती हैं; दो बाहरी और दो भीतरी। जिन बातों को मूर्ख नहीं जान सकता, उनको विद्वान् जान लेते हैं। बिना विद्या के मनुष्य पशु के समान होता है।

विद्या सब आभूषणों से अच्छा आभूषण है। जिस प्रकार एक पत्थर का बेडौल टुकड़ा संगतराश के हाथ में जाकर बड़ी सुन्दर मूर्ति बन जाता है, उसी प्रकार विद्या पढ़कर एक बेडौल मनुष्य भी सुडौल बन जाता है और उसके भीतरी गुण प्रकट होने लगते हैं। इसी लिए विद्वान् का सबसे अधिक मान होता है। इतना मान राजा का भी नहीं होता; क्योंकि राजा का केवल अपने ही देश में मान होता है, परन्तु विद्वान् जहाँ कहीं चला जाय, वहीं उसकी प्रतिष्ठा होती है। उसके मरण के पश्चात् भी लोग उसका यश गाते

है। राजा की प्रतिष्ठा भी विद्वान् ही कायम रखता है; क्योंकि वह पुस्तकें बनाकर राजाओं का नाम संसार में छोड़ जाता है। आज महाराज श्रीरामचन्द्रजी को कौन जानता, अगर वाल्मीकिजी रामायण में उनका चरित न लिखते। इसीलिए कहा है कि विद्या ही से प्रतिष्ठा प्राप्त होती है।

विद्या सब धनों में बड़ा धन है। जिस मनुष्य के पास विद्या है, वह निर्धन होने पर भी कभी भूखों न मरेगा; क्योंकि विद्या सदा उसको धन देती रहेगी। इसके सिवा विद्या एक ऐसा धन है, जिसको न तो कोई चोर चुरा सकता है, न राजा छीन सकता है। अन्य धन की रक्षा के लिए रात भर जागना पड़ता है, ताले कुञ्जी रखने पड़ते हैं; पर विद्या-धन की रक्षा के लिए परमात्मा ने हमको एक ऐसा हृदयरूपी सन्दूक रक्खा है कि जिसके ढोने में न तो परिश्रम पड़ता और न उसकी रक्षा करने में कठिनाई ही। जहाँ कहीं चले जाओ, विद्या-धन तुम्हारे पास है। विद्या-धन और धनों से इतनी विशेषता है कि और धन तो खर्च करते-करते एक दिन समाप्त हो जाते हैं; परन्तु विद्या-धन खर्च करने से बढ़ता है। जितना अधिक विद्या-धन दूसरे लोगों को दोगे, उतना ही अधिक यह बढ़ेगा।

संसार के सब काम विद्या ही से चलते हैं, विना विद्या के हम कुछ नहीं कर सकते । रेलगाड़ी, तार, जहाज़ आदि लोगों ने विद्या ही के बल से बनाए हैं। यदि लोग विद्या न पढ़ते, तो न कपड़ा बुन सकते, न मकान बना सकते और न खेती-बारी आदि ही कर सकते । जो जातियाँ विद्वान् नहीं हैं, वे आज तक जंगलों में नङ्गी रहती या पत्तियाँ पहनती हैं । उनके पास न कपड़े हैं और न मकान । देखो, विद्या के विना उनकी कितनी दुर्गति होती है। विद्या ही के बल से लोग ज़मीन के भीतर से सोना, चाँदी निकालकर धनी बन जाते हैं । विद्या के द्वारा हम सहस्रों कोस पर बैठे हुए अपने इष्ट-मित्रों से पत्र द्वारा बातचीत कर सकते हैं । प्राचीन लोगों का इतिहास भी हमें विद्या द्वारा ही ज्ञात होता है; इसी लिए विद्या सबसे बड़ी चीज है ।

विद्या केवल पुस्तकों के पढ़ने से प्राप्त नहीं होती ; वह तो चीजों को भली प्रकार देखने से होती है । जो लोग केवल किताब के ही कीड़े हैं और संसार की चीजों का अवलोकन नहीं करते, उनको पूरी विद्या नहीं आ सकती । अगर हम विद्या चाहते हैं, तो किताबों को पढ़कर उन पर विचार करें—कि जो कुछ उनमें लिखा है, वह ठीक भी है या नहीं—और चीज़ों की

खूब देखभाल करें। बहुत से मनुष्य ऐसे भी हैं, जो किताबें नहीं पढ़ सकते, पर हैं विद्वान्; क्योंकि उन्हों[ने] चीजों को देखाभाला है और उन पर विचार किया है। लाहौर के महाराजा रणजीतसिंह पढ़े-लिखे न थे; परन्तु अच्छे-अच्छे विद्वान् उनसे हार मानते थे। विद्या जहाँ कहीं मिले, वहाँ से ले लेनी चाहिए। यह विचार मत करो कि अमुक मनुष्य तुमसे छोटा है। अगर वह तुमसे अधिक विद्वान् है, तो तुम उसे बड़ा ही जानो। किसी कवि ने कहा है:—

"उत्तम विद्या लीजिए, यदपि नीच पै होय।
परो अपावन ठौर में, कञ्चन तजत न कोय॥"

अर्थात् जैसे बुरी जगह में पड़े हुए सोने को सब ले लेते हैं, उसी तरह नीच मनुष्य से भी विद्या सीख लेनी चाहिए।

—गंगाप्रसाद

प्रश्न

१—संक्षेप में बतलाओ कि विद्या पढ़ने से क्या-क्या लाभ हैं?
२—सिद्ध करो—"विद्वान् का सबसे अधिक मान होता है।"
३—अन्य धनों से विद्या-धन में क्या विशेषता है?
४—विद्योपार्जन के क्या-क्या साधन हैं?
५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बतलाओ—

सुडौल, दुर्गति, ज्ञात होना, अन्धकार दूर होना, कितावों के कीड़े, अमुक।

६—विद्या, लोग, पशु, वाल्मीकि, रामायण और प्रतिष्ठा ये किस प्रकार की संज्ञाएँ हैं?

७—प्रेम-मंत्र

चढ़ पहाड़ पर यही पुकारो,
मैदानों में यही उचारो।
"घृणा-द्वेष सब दूर धरेंगे,
सबसे हिल-मिल प्रेम करेंगे॥"
प्रेम-फौज का साज सजाकर,
प्रेम-दुंदुभी मधुर बजाकर।
सहमत हो सब काम करेंगे,
भारत में आनन्द भरेंगे॥
दिन में, निशि में, सभी समय में,
मस्तक में औ मृदुल हृदय में।
यह विचार मित्रों के भरना,
"पारस्परिक द्वेष परिहरना॥"
द्वेष-भाव में आग लगाकर,
झूठ और अन्याय भगाकर।
सब पर प्रेम-वारि डारेंगे,

भारत के सुकार्य सारेंगे ॥

जल में, थल में और पवन में,
हिन्दूगण में और यवन में ।
फैला दो विचार शुभ ऐसा,
"हममें-तुममें अन्तर कैसा ?"
"भाई, है घर एक हमारा,
भाई बनकर करो गुजारा ।"
तब सबके सब कार्य सरेंगे,
भारत में सुख-चैन भरेंगे ॥

लोभ-क्रोध को मार भगाओ,
बैर-वाद में आग लगाओ ।
प्रेम-राज जग में फैलाओ,
प्रेम-प्रेम की धूम मचाओ ॥

भारत का जो भला विचारो,
यह सिद्धान्त हृदय में धारो ।
"प्रेम-मंत्र जिसने मन धारा,
उसने विजय किया जग सारा ॥"
प्रेम-रज्जु सिंहों को बाँधे,
प्रेम-मंत्र सब कारज साधे ।
प्रेम-अग्नि पत्थर पिघलावें,
प्रेम-वायु ब्रह्माण्ड हिलावें ॥

प्रेम-चोट हीरे को फोड़े,
प्रेम-गोंद टूटे को जोड़े।
हिन्दू, मुसलमान, ईसाई,
चखो परस्पर प्रेम-मिठाई॥

—भगवानदीन

प्रश्न

१—इस पद्य में भारतवर्ष की उन्नति के क्या-क्या उपाय बताए गए हैं?

२—प्रेम का कैसा प्रभाव है, उदाहरण सहित समझाओ।

३—'चखो परस्पर प्रेम-मिठाई' का क्या अर्थ है?

४—निम्न-लिखित पद्य का अर्थ बताओ—

द्वेष-भाव में आग लगाकर,
झूठ और अन्याय भगाकर।
सब पर प्रेम-वारि डारेंगे,
भारत के सुकार्य सारेंगे॥

५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

सहमत होना, पारस्परिक, न्याय, धूम मचाना और रज्जु।

६—निम्न-लिखित संज्ञाएँ किस प्रकार की हैं—

भारत, हृदय, हिन्दू, पवन, लोभ, क्रोध और सिंह।

८—शिष्टाचार

भले आदमी एक दूसरे के साथ जो व्यवहार करते हैं, उसको शिष्टाचार कहते हैं। उसका मूल सिद्धान्त है, दूसरे को अपने प्रेम और श्रद्धा का परिचय देना और किसी को असुविधा और कष्ट न पहुँचाना। बचपन ही से शिष्टाचार के नियम जान लेने चाहिएँ। ऐसा करने से उन पर चलना स्वाभाविक हो जाता है। ये नियम भिन्न-भिन्न समाजों में भिन्न-भिन्न हैं और देश और काल के अनुसार बदलते रहते हैं। उनमें से कुछ आवश्यक नियम नीचे लिखे जाते हैं—

बड़ों के साथ व्यवहार

(१) यदि कोई बड़ा बुलाए तो "क्या" या "हाँ" मत कहो; "जी" या "जी हाँ" कहो।

(२) लोगों को बुलाने या पत्र लिखने व उनकी चर्चा करने में उनके नाम के पहले पंडित, बाबू, महाशय, मौलवी इत्यादि जो उचित हो अवश्य लगाना चाहिए। यदि नाम न लिया जाय, तो "पंडित-जी" या "मौलवी साहब" कहना या लिखना चाहिए।

(३) अपने से बड़ों की ओर जहाँ तक हो सके पीठ करके मत बैठो या पीठ करके मत चलो।

(४) अपने गुरु, पिता आदि के साथ चलना हो, तो उनसे एक-दो कदम पीछे रहो। यदि वे पीछे हों, तो रास्ता देकर उनको आगे हो जाने दो।

(५) कोई काम साथ करना हो, तो जो छोटा है, उसको पहले तय्यार हो जाना चाहिए; अच्छा तो यही है कि दोनों साथ ही उद्यत हों। अपने लिए अपने से बड़े को प्रतीक्षा नहीं करानी चाहिए।

(६) अगर कोई बड़ा तुमको किसी दूर के आदमी को बुलाने के लिए कहे, तो वहीं से मत चिल्लाओ, कुछ आगे बढ़कर उसको बुला लो। अगर किसी बड़े को बुलाना हो, तो दौड़कर उनके पास चले जाओ।

(७) कथा या व्याख्यान के बीच में न उठो। यदि उठना ही हो, तो जो प्रसंग चल रहा है, उसके समाप्त होने पर उठो। बीच में उठ जाना बोलनेवाले का एक प्रकार से निरादर करना है।

(८) यदि तुम किसी चबूतरे पर या ऊँची जगह खड़े हो और अपने से बड़े से बातचीत करनी हो, तो नीचे उतरकर बात करो।

(९) मेज पर झुककर बातचीत मत करो। अगर खड़े रहना हो, तो सीधे खड़े रहो।

(१०) अपने से बड़े के साथ, या अतिथि के साथ

यदि गाड़ी पर बैठना हो, तो उनके बाईं ओर बैठो, या उनके सामनेवाली बैठक पर। यदि गाड़ी अपनी ही हो, तो इस नियम पर विशेष ध्यान रखना चाहिए।

(११) अपने से बड़े या अतिथि के आने पर उनका स्वागत खड़े होकर करना चाहिए। जब वे जाने लगें, तो द्वार तक या गाड़ी तक उनके साथ जाना चाहिए।

(१२) कोई बड़ा या अतिथि हमारे स्थान की रीति से विरुद्ध व्यवहार कर बैठे, तो उस पर हँसो मत।

(१३) जब कोई बड़ा या अतिथि हमारे यहाँ भोजन करे, तो उचित यही है कि हम अपने हाथ से भोजन परोसें और उनके भोजन कर लेने के उपरान्त खाएँ, उनसे पहले ही खा लेना किसी अवस्था में भी उचित नहीं। साथ भोजन करने की अवस्था में उनके सामने पहले भोजन रखना चाहिए और यदि थालियाँ छोटी बड़ी हों, तो बड़ी थाली उनके और छोटी अपने सामने रखनी चाहिए।

साधारण

(१) कोई दूसरा आदमी तुमको पैसा, रुपया, मिठाई दे, तो बिना अपनी माता या अपने पिता से आज्ञा लिये मत लो।

(२) किसी को कोई चीज देनी हो, तो बाएँ हाथ से मत दो और लेनी हो, तो बाएँ हाथ से न लो।

(३) जब तक जान-पहचान न हो, किसी पुरुष से चार आँखें करके बातचीत न करो। पराई स्त्री से बात करने की आवश्यकता पड़ जाय, तो स्त्री के पैरों की ओर देखना चाहिए, न कि आँखों की ओर। स्त्रियों की तरफ टकटकी लगाकर देखना बहुत बड़ी असभ्यता है।

(४) किसी के घर में जिधर स्त्रियाँ रहती हों (अन्तःपुर में) न जाना चाहिए। अपने घर में भी स्त्रियों को किसी प्रकार से सूचना देकर जाना चाहिए।

(५) जिस घाट पर स्त्रियाँ नहाती हों या जिस रास्ते से स्त्रियाँ जाती हों, उधर न जाओ।

(६) सभ्य समाज में डकार लेना, खखारना, नाक में उँगली डालना, जमहाई लेना, पैर हिलाते रहना, उँगली चटकाना, दाँत से नाखून काटना, कानाफूसी करना, अँगड़ाई लेना, कान में उँगली या कलम आदि डालना इत्यादि बुरा समझा जाता है। यदि जमहाई आए, तो मुँह पर हाथ रख लेना चाहिए, यदि नाक बहती हो, तो रूमाल से साफ कर लेनी चाहिए।

(७) बहुत से ऐसे शब्द हैं, जिनका प्रयोग करना

शिष्ट लोगों में भद्दापन समझा जाता है। उनके भाव सङ्केत से अथवा कोमल शब्दों में प्रकट करने चाहिएँ। जैसे हिन्दुओं में जनेऊ को दाहने कान पर चढ़ाने का सङ्केत करने से लोग समझ जाते हैं कि क्या अर्थ है। यदि शब्दों ही में प्रकट करो, तो लघुशङ्का, शौच, जङ्गल, दिशा इत्यादि शब्दों से।

(८) धोती या कुर्त्ता हटाकर या कपड़े के अन्दर हाथ डालकर बदन खुजलाना अच्छा नहीं है।

(९) गोटे की टोपी या कपड़े बच्चों को शोभा देते हैं, बड़ों को नहीं।

(१०) किसी के पीठ पीछे उसकी बुराई मत करो। हर एक आदमी के गुणों की चर्चा करना अच्छा है; पर वह भी उसके मुँह पर नहीं। यदि दूसरे की बुराई करनी ही पड़े, तो ऐसे शब्दों में करो, जिनका प्रयोग उसके सामने भी कर सको। अपनी स्तुति मत करो, न सुनो।

(११) अगर सड़क पर किसी शव को ले जाते हुए देखो, तो एक तरफ हट जाओ और हाथ जोड़ दो। अँगरेजी चाल टोपी उतारने की है।

(१२) किसी से उसका वेतन, आयु या जाति मत पूछो, जब तक कि पूछना आवश्यक न हो।

(१३) दूसरे की चिट्ठी ऊपर से या पीछे से झाँक-कर मत पढ़ो।

(१४) दूसरे आदमी की बात जब तक समाप्त न हो, बीच में मत बोल उठो। यदि ऐसा हो जाय, तो तुरन्त क्षमा माँगो।

(१५) दो आदमी बातें करते हों, तो उनके पास बिना पूछे न जाना चाहिए।

(१६) कई आदमी बैठे हों, तो उनके बीच में से न जाना चाहिए। जाना हो, तो पीछे से जाओ और यदि बीच ही में से होकर जाना पड़े, तो झुककर क्षमा माँगते हुए निकल जाओ।

(१७) जब कई आदमी एक साथ खाना खाने बैठें, तो सबको साथ ही आरम्भ करना चाहिए और साथ ही उठना चाहिए। यदि कोई पहले खा ले, तो उस समय तक उसे बैठे रहना चाहिए, जब तक सब न उठें।

(१८) विशेष अवसर पर जब कभी किसी को निमंत्रित करो, तो उसके बच्चों को बुलाना मत भूल जाओ और जो नौकर साथ आए, उसको अवश्य खिला दो। निमंत्रित सज्जनों को उनकी स्थिति के अनुसार बैठने की जगह दो।

(१९) यदि तुम किसी स्थान में जाओ, जहाँ तुम्हारा आदर-सत्कार हो और तुम्हारे साथ कोई मित्र या अतिथि हो, तो उसको मत भूल जाओ। उसको भी अपने आदर-सत्कार में सम्मिलित करो।

(२०) किसी को अपने साथ गाड़ी पर लाओ, तो उसको यथासम्भव उसके घर तक पहुँचाना चाहिए।

सहूर की बातें

शिष्टाचार की बहुत-सी बातें ऐसी हैं, जिनका कारण नहीं बतलाया जा सकता। हम अतिथि को अपने दाहने क्यों बैठाएँ अथवा किसी को कोई चीज़ बाएँ हाथ से क्यों न दें? बहुत-सी बातें ऐसी हैं, जो देश और काल के अनुसार बदलती रहती हैं। बहुत-सी ऐसी हैं, जिनका अनुभव या अभ्यास कुछ दिनों तक ऊँची श्रेणी के लोगों के पास रहने से प्राप्त होता है। ऐसी कुछ बातों का उल्लेख ऊपर किया जा चुका है।

इनके अतिरिक्त बहुत-सी बातें ऐसी हैं, जो साधारण बुद्धि, सहूर (शऊर) से सम्बन्ध रखती हैं, इसलिए, देश और काल के अनुसार बदलती नहीं। तिस पर भी लोग इन बातों पर ध्यान नहीं देते। ऐसी कुछ बातें नीचे लिखी जाती हैं।

(१) अलमारी से कोई चीज़ निकालो, तो उसका द्वार खुला न छोड़ दो।

(२) छड़ी, डंडा, छाता कोने में रक्खो।

(३) कुर्सी हटाना हो, तो उठाकर हटाओ, खींच-कर नहीं।

(४) खिड़की से बाहर कोई चीज़ न फेंको, यदि फेंकना ही पड़े, तो पहले देख लो कि बाहर कोई है तो नहीं।

(५) रेल के कमरे में जाकर या उसमें से निकल-कर द्वार बन्द करना न भूल जाओ।

(६) शीशे की चीज़ या तेल, दूध, पानी इत्यादि का बर्तन बीच रास्ते में मत रक्खो। एक ओर दीवार के पास कोने में या चौकी आदि के नीचे रक्खो।

(७) दावात, शीशी, घी, दूध के बर्तन इत्यादि आले पर या अलमारी में कुछ पीछे हटाकर रक्खो।

(८) चाकू काम होने पर खुला न छोड़ दो। यदि दूसरे के हाथ में देना हो, तो फल की तरफ से न दो।

(९) आलपीन ऐसे खोंसो कि उसकी नोक काग़ज़ के बाहर न निकली रहे और किसी के हाथ में देना हो, तो नोक की ओर से न दो।

(१०) मार्ग में छड़ी घुमाते न चलो। छाता या

छड़ी इस प्रकार बग़ल के नीचे मत रक्खो कि दूसरे को लग जाय। उसको लटकाकर ही चलना अच्छा है।

(११) सड़क के बीच में खड़े होकर बातचीत मत करो। मार्ग में ठहरकर बात करना ही हो, तो एक ओर हट जाओ।

(१२) भीड़ में दूसरे को मार्ग तुरंत देना चाहिए। पीछे का आदमी आगे हो जाय, तो बुरा नहीं मानना चाहिए।

(१३) कुर्सी आदि दीवार से सटाकर मत रक्खो।

(१४) दीवार पर लिखना अच्छा नहीं।

(१५) चाकू से मेज खोदना अच्छा नहीं।

(१६) बिछौने पर पैर पोंछकर जाना चाहिए।

(१७) चाकू, कलम, दावात, ताली अर्थात् ऐसी चीज़ों के रखने की जगह निश्चित होनी चाहिए, जिनकी आवश्यकता सदा पड़ती हो। काम हो जाने पर इनको फिर वहीं रख दो।

(१८) किसी की तरफ उँगली उठाकर मत दिखलाओ।

(१९) खाने से पहले पीने का पानी अपने पास रख लो।

(२०) घाट पर नहाकर बाँह पहले पोछो, जिससे छींटें दूसरों पर न पड़ें।

(२१) किसी से अगर तुम सहमत न हो, तो यह न कहो कि 'आप भूल करते हैं' या 'आपकी समझ में मेरी बात नहीं आई' ; ऐसी चरचा ही मत करो। आवश्यकता पड़े, तो कहो 'मेरे शब्द शायद स्पष्ट नहीं थे' या 'मैं अपना मतलब नहीं समझा सका' इत्यादि।

(२२) यदि किसी के घर काम से जाओ, तो साधारण शिष्टाचार अर्थात् प्रणाम आदि के बाद कार्य की बात करना आरम्भ कर दो, और उतनी ही देर बैठो जितना आवश्यक हो।

—रामनारायण मिश्र

प्रश्न

१—बड़ों से बातचीत करते समय किन-किन बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए?

२—शिष्टाचार का क्या अर्थ है? साधारण जीवन में इस की आवश्यकता क्यों पड़ती है?

३—अतिथि के साथ बातचीत और व्यवहार करते समय किस प्रकार के शिष्टाचार का विशेष ध्यान रखना उचित है?

४—साधारण सहूर और शिष्टाचार में क्या भेद है?

५—सङ्केतों द्वारा कैसी बातों को प्रकट करना उचित है?

६—नित्य की दिनचर्या में कौन-कौन सी बातें आवश्यक हैं?

७—उद्यत, प्रतीक्षा, अतिथि, अवस्था, स्तुति शब्दों का प्रयोग अपनी भाषा में करो।

८—नीचे लिखी संज्ञाएँ जातिवाचक हैं, उनके जोड़ की व्यक्तिवाचक संज्ञाएं बनाओ—

आदमी, स्त्री, कपड़ा और कुत्ता।

९—यदि कोई बड़ा बुलाए तो "क्या" या "हाँ" मत कहो "जी" या "जी हाँ" कहो। इस वाक्य मे अव्यय बताओ।

९—मधुमक्खी

(१)

इस परिश्रमी मधुमक्खी को मुझे देखना भाता है
बड़े प्रेम से ताक रहा हूँ कैसा इसका छाता है।
सूर्योदय के पहले ही से ये सब अपनी निद्रा त्याग
लगी काम में कर्मयोग से हैं कैसा इनका अनुराग।

(२)

ईश्वर ने है बुद्धि इन्हें दी सच्चे मन से ये किस भाँति।
प्रतिदिन काम किया करती हैं परिश्रमी है इनकी जाति॥
किया इन्होंने इन छत्तों के छेदों का कैसा निर्माण।
इनकी कलाकुशलता लख के होगा हर्ष न किसे महान्?

(३)

बाहर आतीं, भीतर जातीं, इधर उधर उड़ जाती है।
जब तक काम न पूरा होता, कभी नहीं सुसताती हैं॥

क्या करना है मुझे, बात यह, अहा जानती है प्रत्येक।
क्षुद्र जीव हैं, ये सब तो भी इनमें कितना भरा विवेक॥

(४)

ग्रीष्म काल के उष्ण दिनों में घूम-घूम कर यह सर्वत्र।
कण-कण मधुरस बड़े यत्न से करती हैं देखो एकत्र॥
अपने क्षुद्र अल्प जीवन का समय न करतीं नाहक नष्ट।
नहीं खेल में भूली रहतीं, हो कर्त्तव्य-कर्म-पथ-भ्रष्ट॥

(५)

फूल फूलकर बड़े प्रेम से उड़ती हैं करती गुञ्जार।
इस प्रकार इनका श्रम लखकर, करता हूँ मैं इनको प्यार॥
कर्मवीर सी बनी सकल ये आलस से सब नाता तोड़।
रोज़ रोज़ अपनी पूँजी में मधु कुछ थोड़ा लेतीं जोड़॥

(६)

इसी भाँति मैं मन देकर के, करूँ हर घड़ी अपना काम।
करूँ घृणा आलस निद्रा से मधुमय हो यह मेरा धाम॥
देखूँ जो कुछ जहाँ जहाँ मैं उनमें से लूँ सार निचोड़।
अपनी अल्पज्ञान-पूँजी में लूँ कुछ-कुछ मैं प्रतिदिन जोड़॥

—लोचनप्रसाद पाण्डेय

प्रश्न

१—इस पद्य से हमको क्या शिक्षा मिलती है?
२—"इनमें कितना भरा विवेक।" इनके विवेक का कोई उदाहरण दो।

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के क्या अर्थ हैं ?

छाता, अनुराग, निर्माण, कण-कण, कर्मवीर, कर्तव्य-कर्म-पथ-भ्रष्ट, मधुमय धाम, ज्ञान-पूँजी

४—निम्न-लिखित शब्दों के लिङ्ग बताओ—

मधुमक्खी, सूर्य, दिन, निद्रा और ईश्वर।

१०—भीम की वीरता

दृश्य १

पात्र—

युधिष्ठिर
अर्जुन
भीम
नकुल
सहदेव

} जमीन पर बैठे बातचीत कर रहे हैं।

युधिष्ठिर—भाई, आज बहुत दिनों में ठहरने का अच्छा स्थान मिला है।

अर्जुन—क्या किया जाय, दादा विधाता की ऐसी ही इच्छा है; पर यह ब्राह्मण बड़ा भला मनुष्य है। इसने हमको कितनी अच्छी तरह से रक्खा है।

नकुल—सचमुच भाई! और ब्राह्मणी तो हम

लोगों को अपने लड़कों सा ही समझती है। माता कुंती को उसने कितनी अच्छी तरह से रक्खा है!

भीम—भाई, कुछ भी हो, उसने मुझे बहुत अच्छा भोजन कराया; मैं तो इसीलिए उससे प्रसन्न हूँ।

सहदेव—(कान लगाकर) अरे, यह रोना सुन पड़ता है, क्या? हाँ, रोना ही तो है।

न०—अब तो ज़ोर से सुन पड़ने लगा, जान पड़ता है ब्राह्मणी रो रही है।

भी०—(सहदेव से) सहदेव, जाकर देख तो आओ कि कौन रोता है।

स०—जाता हूँ (जाता है)।

अ०—भाई, किसी का रोना सुनकर, तो न जाने कैसा जी होने लगता है।

भी०—क्यों न हो भाई, हम लोग क्षत्रिय हैं। हमारा काम ही समाज की रक्षा करना है। हम लोग दूसरे का दुख कैसे देख सकते हैं?

न०—सच है दादा, समाज की रक्षा हमारे ही हाथ में है, हमारा कर्त्तव्य है कि किसी को दुखी न होने दें।

अ०—ईश्वरीय प्रकोप भर न हो फिर कौन हम लोगों के सामने दुखी रह सकता है?

स०—दादा, ब्राह्मणी ही रोती है।

यु०—क्यों, क्या तुमने रोने का कारण नहीं पूछा ?

स०—पूछा है, दादाजी ! बड़ी भयानक कथा है। इस गाँव के पास एक राक्षस है। उसके खाने के लिए गाँव के लोग बारी-बारी से एक-एक आदमी भेजते हैं। आज ब्राह्मण के घर की बारी है। ब्राह्मण का पुत्र आज भेजा जायगा, इसीलिए ब्राह्मणी रो रही है।

अ०—और यदि उसके लिए आदमी न भेजा जाय तो ?

स०—तो वह राक्षस गाँव का गाँव मिटा दे।

यु०—यह तो सचमुच बड़े दुःख की बात है। भाई, हम लोगों के रहते हुए ब्राह्मण और ब्राह्मणी को दुख न मिलना चाहिए।

भी०—ब्राह्मण ही को क्यों, यह तो गाँव भर की आपत्ति है। उस राक्षस को तो मारना चाहिए।

न०— पर वह राक्षस है, उसका मारना सहज नहीं है।

अ०—सहज नहीं है ! तो क्या हम लोग सहज काम करने के लिए ही संसार में आए हैं ? मनुष्य को सदैव कठिन काम करने के लिए तैयार रहना चाहिए।

भी०—तभी तो वह मनुष्य है, नहीं तो मनुष्य होने से लाभ ही क्या ?

यु०—तो फिर उपाय क्या है ?

न०—उपाय क्या है दादा ? हम लोग चलें और उस राक्षस को मार डालें।

स०—सभी को चलना पड़ेगा ?

भी०—इस साधारण काम के लिए सबको क्यों चलना पड़ेगा ? कोई भी एक जाकर उस राक्षस को मार आएगा। सबका जाना ठीक नहीं है।

अ०—मैं समझता हूं मुझ अकेले का जाना ठीक होगा। सबके कष्ट करने की आवश्यकता नहीं है।

भी०—ठीक है भाई, तुम अकेले एक को नहीं, अनेक राक्षसों को मार सकते हो। पर राक्षस के साथ तो मल्लयुद्ध का ही काम है। उसके लिए मैं सोचता हूँ, मेरा जाना ठीक होगा। (युधिष्ठिर से) क्यों दादा, आपकी क्या राय है ?

यु०—हाँ हाँ, यही ठीक है। राक्षस से लड़ने के लिए तुम्हीं सबसे ठीक हो।

भी०—तो फिर दीजिए आज्ञा।

यु०—अच्छा जाओ, पर ब्राह्मणी से कहते जाना कि तुम्हारे लड़के के बदले में जाता हूँ। ईश्वर तुम्हें विजयी करे, जाओ।

भी०—जो आज्ञा (जाता है)।

दृश्य २

युधिष्ठिर
अर्जुन
नकुल
सहदेव } बैठे हैं।

यु०—भीम को गए बहुत समय हो गया। अभी तक वह क्यों नहीं आया ?

अ०—आते होंगे, दादा ! राक्षस के मारने में भी तो देर लगेगी।

न०—क्या जाकर देखूँ दादा ?

(भीम का प्रवेश)

चारों पांडव—(दौड़कर और भीम से लिपट कर) आहा ! आ गए भाई ! राक्षस को तो मार ही आए होगे ?

भी०—(बैठकर, लम्बी साँस लेकर) ईश्वर की कृपा और दादा का आशीर्वाद है भाई ! वह राक्षस मर गया।

सब—(बैठकर) धन्य है भाई, तुम्हारी शक्ति को।

यु०—कैसा युद्ध हुआ भीम ?

भी०—दादा, राक्षस बड़ा बली था। खूब युद्ध हुआ; पर अन्त में आपके चरणों के प्रताप से मेरी ही जीत हुई।

ब्राह्मण तथा गाँव के लोग—(प्रवेश करके चिल्लाते हुए) धन्य है वीर तुमको, तुम लोगों ने हमारा भारी दुख मिटा दिया। ईश्वर तुम्हें दीर्घायु करे।

(सब लोग भीम की ओर देखकर एक ओर से जाते है। पांडव लोग दूसरी ओर से जाते है।)

(बाल-नाटक-माला से)

प्रश्न

१—उपर्युक्त कथा को अपने शब्दों मे लिखो।
२—युधिष्ठिर ने राक्षस को मारने के लिए भीम को ही क्यों भेजा ?
३—भीम की सम्मति में क्षत्रियों का क्या धर्म है ?
४—निम्न-लिखित शब्दों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—
समाज, प्रकोप और मल्लयुद्ध।

११—मीठी बोली

बस में जिससे हो जाते है प्राणी सारे।
जन जिससे बन जाते है आँखों के तारे॥
पत्थर को पिघलाकर मोम बनानेवाली।
मुख खोलो तो मीठी बोली बोलो प्यारे॥ १॥
रगड़ों झगड़ों का कड़वापन खोनेवाली।
जी में लगी हुई काई को धोनेवाली॥

सदा जोड़ देनेवाली है टूटा नाता।
मीठी बोली प्यार-बीज है बोनेवाली ॥ २ ॥
काँटों में भी सुन्दर फूल खिलानेवाली।
रखनेवाली कितने ही मुखड़ों की लाली ॥
निपट बना देनेवाली है बिगड़ी बातें।
होती है मीठी बोली करतूत निराली ॥ ३ ॥
जी उमगानेवाली चाह बढ़ानेवाली।
दिल के पेचीले तालों की सच्ची ताली ॥
फैलानेवाली सुगन्ध सब ओर अनूठी।
मीठी बोली है पीछे फूलों की डाली ॥ ४ ॥
बह जाता है उरों बीच रस सुन्दर सोता।
प्यारा बनता है वन बसनेवाला तोता ॥
बुझ जाती है वैर फूट की आग धधकती।
मीठी बोली से है जन पर जादू होता ॥ ५ ॥

—अयोध्यासिंह उपाध्याय

प्रश्न

१—मीठी बोली बोलने के लाभ संक्षेप में लिखो।

२—निम्न-लिखित पद्यों के आशय बताओ—

(क) पत्थर को पिघलाकर मोम बनानेवाली।

(ख) जी में लगी हुई काई को धोनेवाली।

(ग) दिल के पेचीले तालों की सच्ची ताली।

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के क्या अर्थ हैं ?

आँखों के तारे, मुखड़ों की लाली, निपट, करतूत, जी उमगानेवाली, अनूठी।

४—निम्न-लिखित शब्दों के वचन बताओ—

जन, पत्थर, मोम, काई, काँटों, दिल और फूल।

१२—जल और वायु

भोजन का मिलना मनुष्य के लिए बहुत आवश्यक है। परन्तु भोजन से अधिक आवश्यक पानी है; क्योंकि भोजन न मिलने से मनुष्य कई दिन तक जी सकता है, पर पानी न मिलने से घण्टों में काम तमाम हो जाता है। शरीर में तीन चौथाई पानी है और एक चौथाई में और सब चीजें। इसीलिए शरीर के जलाने से पानी भाप बनकर उड़ जाता है और बाकी चीजें भस्मरूप में रह जाती है।

स्मरण रखना चाहिए कि बुरा पानी विष के समान है। गाँवों में बहुधा लोग तालाबों का पानी काम में लाते हैं। उन्हीं तालाबों के किनारे कूड़ा छोड़ते है, जो सड़कर पानी को खराब कर देता है। इसके अलावा बस्ती के समीपवाले तालाबों में बस्ती का कूड़ा बहकर जाता है और पानी को बिगाड़ देता है। नदियों का

पानी बहने के कारण साफ रहता है ; परन्तु वर्षा में वह भी मैला हो जाता है । बहुत-सी महामारियों, जैसे हैजा, कालज्वर आदि के बीज गन्दे पानी में रहते हैं । जो बाजारू तरकारी, फल, वस्त्र आदि के साथ, जो उसमें धोए जाते हैं, मनुष्य के शरीर में चले जाते हैं ।

कुओं के विषय में हमको पहले मिट्टी का कुछ हाल बताना चाहिए । मिट्टी दो तरह की होती है—(१) पानी सोखनेवाली, जैसे बालू, चूना, कङ्कड़ और (२) पानी न सोखनेवाली, जैसे चिकनी मिट्टी । पृथ्वी में दोनों तरह की मिट्टियों की तहें होती हैं । बहुधा ऊपर की तह सोखनेवाली मिट्टी की होती है । जब पानी बरसता है, तो वह मिट्टी में सोख जाता है और जब तक चिकनी मिट्टी की तह नहीं मिलती, तब तक नीचे चला जाता है । चिकनी मिट्टी की तह मिलने पर वहीं इकट्ठा हो जाता है और कुआँ खोदने पर निकल आता है । जितना हो गहरा कुआँ होगा उतना ही अच्छा पानी निकलेगा ; क्योंकि बाहरी पानी में सड़ी और जहरीली चीजों के ऊपर रह जाने का अधिक मौका मिलेगा । जिन कुओं में चिकनी मिट्टी काटकर बहुत नीचे से पानी आता है, वे सबसे अच्छे होते हैं ।

खुले कुओं में पत्तियाँ, मिट्टी, झींगुर और चूहे आदि गिर पड़ते हैं और सड़कर पानी को बिगाड़ देते हैं, यहाँ तक कि कभी-कभी पानी में कीड़े पड़ जाते हैं। ऐसा पानी बहुत हानिकारक होता है। इसीलिए कुओं को ढका रखना चाहिए। कुओं पर जगत का होना ज़रूरी है। नहीं तो बाहर का गन्दा पानी बहकर भीतर चला जाता है। कुओं के समीप नहाना, गन्दा पानी छोड़ना, पेड़ों का लगाना और गड्ढों का बनाना भी बुरा है; क्योंकि मैला पानी रसिया कर उनमें चला जाता है।

पानी भरने के लिए साफ रस्सियाँ और बरतन चाहिए। साल में कम से कम एक बार कुओं को ओगारना चाहिए, अर्थात् उनकी मिट्टी और टूटे बरतनों के टुकड़े निकाल देने चाहिए। ओगारने के पीछे थोड़ा-सा चूना डालना अच्छा होता है; क्योंकि इससे अनेक प्रकार के कीड़े मर जाते हैं।

पानी को छानकर पीना चाहिए। छानने की अच्छी-अच्छी कलें विलायत में बनने लगी हैं। तीन बरतनों में कोयला, बालू और कङ्कड़-पत्थर भरकर एक दूसरे पर रक्खो। इन बरतनों के पेंदे में छेद कर दो और ऊपर से पानी डाल दो, इनसे टपककर जो पानी

नीचे आता है, वह साफ होता है। पानी को उबाल डालने से उसके रोगबीज मर जाते हैं और अगर चूने का भाग ज़्यादा है, तो नीचे बैठ जाता है। अगर कुछ भी न हो सके; तो मोटे साफ़ कपड़े से पानी छानकर पीना चाहिए।

पानी से भी ज़रूरी चीज हवा है; क्योंकि बिना हवा के कुछ ही मिनटों में आदमी मर जाता है। परन्तु हवा का विष पानी के विष से भी बुरा है। एक बार कलकत्ते में १२३ आदमी एक ही रात में एक कोठरी के भीतर मर गए; क्योंकि साफ हवा जाने के लिए उसमें केवल दो छोटे-छोटे झरोखे थे, जिनसे पूरी हवा नहीं पहुँच सकी। अँधेरे मकानों तथा बन्द कोठरियों की हवा बहुत बिगड़ी रहती है। उसमें विष का भाग अधिक होने से दीपक नहीं जलता रह सकता और घुसनेवाले आदमी तुरन्त मर जाते हैं। तब लोग कहने लगते हैं कि यहाँ भूत या प्रेत था; परन्तु प्रेत का मारा चाहे टोने-टोटके से बच जाय, पर हवा के विष का मारा यमलोक ही में दम लेता है।

जहाँ तक हो सके मकान को हवादार रखना चाहिए। डॉक्टरों का कहना है कि जब हवा का अमृत भाग खर्च हो जाता है, तब हवा साधारण से हल्की हो जाती है और

हल्की चीज़ सदा भारी के ऊपर चली आती है (जैसे तेल पानी के ऊपर चला जाता है)। इसीलिए कमरे में खराब हवा ऊपर को चली जाती है और अगर छत के समीप झरोखा या खिड़की है, तो उसके द्वारा वह बाहर निकल जाती है। इस हवा के निकल जाने से कमरे की हवा कम और हल्की हो जाती है, तब बाहर से नीचे की खिड़की के द्वारा साफ हवा भीतर आती है। इसीलिए हर कमरे में दो तरह की खिड़कियाँ रखनी चाहिए, ऊपर छत के समीप और नीचे फर्श के क़रीब।

हर एक आदमी को एक घंटे में ३००० घन फीट ताज़ी हवा की ज़रूरत है। कमरे की लम्बाई, चौड़ाई और उँचाई को आपस में गुणन कर लो, तो घनफल निकलेगा। जैसे कोई कमरा २० फ़ीट (१३ हाथ) लम्बा, १२ फीट (८ हाथ) चौड़ा और १३ फीट (९ हाथ) ऊँचा हो, तो उसमें २०×१२×१३ या ३१२० घनफीट हवा रहेगी, जो एक घंटे में एक आदमी के श्वास लेने से खराब हो जायगी। कमरे के भीतर जो सामान, अलमारी, मेज़ आदि हैं, वे हवा के घनफल को और भी कम करते हैं। इसलिए हवा के आने-जाने के लिए नीचे ऊपर जितनी खिड़कियाँ हों उतना ही अच्छा है।

स्मरण रखना चाहिए कि आग और लैम्प के

जलने में भी हवा का अमृतभाग बहुत व्यय होता है इसलिए ऊपर के लिखे कमरे में अगर एक आदमी ह और एक साधारण लैम्प जलता हो, तो हवा आ ही घंटे में गन्दी हो जायगी। खिड़कियों के खुले रह से हवा बराबर ताजी रहा करती है। घर में या उस इर्द-गिर्द कोई दुर्गन्धवाली या सड़नेवाली वस्तु रक्खी जाय; क्योंकि उसका जहर उड़कर हवा मिल जाता है और बीमारी पैदा करता है।

—चन्द्रमौलि सुकु

प्रश्न

१—पानी किस प्रकार दूषित होता है ?

२—जल द्वारा फैलनेवाले रोगों से बचने के साधन बताओ

३—हमारे मकान कैसे होने चाहिएँ ? उत्तर में उचित कारण भी लिखो।

४—हवा से किस प्रकार रोग फैलते हैं ? इन रोगों से बचने के उपाय बतलाओ।

५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बतलाओ और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—

काम हो जाना, अलावा, महामारी, टोना-टोटका, और यमलोक में दम लेना।

६—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पैरे में जो-जो संज्ञाएँ आई हैं, उनके वचन बताओ।

७—पुंलिंग अकारान्त शब्दों के रूप दोनों वचनों में एक-से रहते हैं। जैसे, एक मनुष्य, चार मनुष्य।

उपर्युक्त पाठ में कुछ ऐसे ही पुंलिंग अकारान्त शब्दों को बताओ, जिनके रूप दोनों वचनों में एक-से रहते हैं।

८—चूहा, कीड़ा, कोयला और झरोखा शब्दों के बहुवचन बनाओ।

१३—धीर नर

(१)

पड़े विपद पर विपद किन्तु पद पीछे नहीं हटाते हैं।
अपना रोना कभी न रोते साहस नहीं घटाते हैं॥
बन पड़ता है जहाँ तलक दीनों का दुःख घटाते हैं।
निज पौरुष से समर-भूमि में अरि को धूल चटाते हैं॥
वही धीर नर धरा-धाम में धवल कीर्ति नित पाते हैं॥

(२)

मनुज-केसरी इस भव-वन में भय-गज मार भगाते हैं।
पड़े लोह पिंजड़े में तो भी घास कदापि न खाते हैं॥
दम में दम जब तक रहता है अपनी आन निभाते हैं।
श्वान समान दशन दिखलाकर वे दुम नहीं हिलाते हैं॥
उनकी सूरत देख भीरु भय भूरि भरे थर्राते हैं॥

(३)

अत्याचारी की गर्दन को वे मरोड़ झट देते हैं।
अन्यायी का मुख थप्पड़ से सदा मोड़ वे देते हैं॥

कोटि विघ्न आ पड़ें कार्य निज नहीं छोड़ वे देते हैं।
लाख विफलताओं पर भी दिल नहीं तोड़ वे देते हैं॥
धीर धुरन्धर वही वीरवर विश्वविदित हो जाते हैं॥

(४)

चाल चले उनसे कोई क्या नहीं काल से डरते हैं।
शूरों की संसार-समर में सन्तत करणी करते हैं॥
मार-मारकर दुष्ट-दलों को भार भूमि का हरते हैं।
हो जाते हैं अमर जगत में कभी नहीं वे मरते हैं॥
कीर्ति-कौमुदी से अपनी वे विमल चन्द्र बन जाते हैं॥

(५)

अटल सदा निज प्रण पर रहते, करते सत्पथ त्याग नहीं।
अत्याचारी अधम जनों से उनको है अनुराग नहीं॥
नहीं चाहते हलुवा-पूड़ी, अशन मिले पर साग नहीं।
पर स्वतन्त्रता पर वे अपनी लगने देते दाग नहीं॥
धृति धारण कर ध्रुव से बनते धीर वही कहलाते हैं॥

"सनेही"

प्रश्न

१—धीर नर कौन है ? संक्षेप में उत्तर दो।

२—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बतलाओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

धूल चाटना, आन निभाना, दिल तोड़ना, विश्वविदित, दाग लगाना, धवल कीर्ति, भीरु और कीर्ति।

३—निम्न-लिखित शब्दों के बहुवचन बनाओ—
विपद, अरि, दशन, गर्दन, प्रण।

१४—बॉय-स्काउट संस्था

आपने बॉय-स्काउट संस्था का नाम तो सुना ही होगा। शायद आपने बॉय-स्काउट्स भी देखे हों और आश्चर्य नहीं कि आप लोगों में कोई-कोई स्काउट्स हों। पर क्या आपको ज्ञात है कि यह संस्था कब और किसके द्वारा स्थापित हुई थी? क्या कभी आपने यह भी सोचा है कि इस संस्था से क्या लाभ है? आइए, आज आपको इसकी जीवन-कहानी सुनाएँ।

वर्तमान स्वरूप में यह संस्था पहले-पहल इङ्गलैण्ड में शुरू हुई। वहाँ के सर राबर्ट बेडेन पावेल साहब ने इसकी नींव डाली थी। उन्होंने सन् १९०० ईसवी में, जिस समय दक्षिण अफ्रीका में युद्ध हो रहा था, यह देखा कि उचित शिक्षा दिए जाने पर लड़के सैनिकों की तरह बड़े उत्साह के साथ युद्ध के कार्यों में भाग लेते हैं। उस युद्ध में सर राबर्ट ने लड़कों की एक सेना तैयार की थी। उसने अङ्गरेजी फौज को बड़ी सहायता पहुँचाई। लड़कों ने बड़ी वीरता के कार्य किए।

युद्ध समाप्ति के पश्चात् सर राबर्ट बेडेन पावेल ने यह संस्था इस विचार से स्थापित की कि समय पड़ने पर लड़के अपनी वीरता दिखा सकें। उनमें नया बल और नया उत्साह पैदा हो। पहले इस संस्था में केवल १३ से १६ वर्ष तक के लड़के भरती किए जाते थे, पर जब अनुभव से ज्ञात हुआ कि छोटे-छोटे बालक भी आश्चर्यजनक कार्य कर दिखाते हैं, तो ७ से १२ वर्ष तक के बालक भी लिये जाने लगे। इन बालकों की सेना "कब्स" कहलाती है। "कब्स" का अर्थ है सिंह के बच्चे। १८-१६ वर्ष से ऊपर की आयु के लोग भी इसमें सम्मिलित होते हैं। उन्हें "सीनियर" अर्थात् उच्चकोटि के स्काउट्स कहते हैं।

स्काउट-दल कई भागों में बाँट दिया जाता है। प्रत्येक को "ट्रुप" कहते हैं। एक ट्रुप में कई "पेट्रोल" अर्थात् समुदाय होते हैं। हरएक समुदाय में बहुधा ६ से ६ तक स्काउट्स रहते हैं। प्रत्येक पेट्रोल का अलग-अलग नाम होता है। इङ्गलैण्ड में बहुधा किसी पशु के नाम पर पेट्रोल का नाम रक्खा जाता है। यहाँ पर किसी वीर के नाम पर, जैसे अर्जुन पेट्रोल। हरएक समुदाय का एक मुखिया चुना जाता है, जिसको पेट्रोल-लीडर कहते हैं।

बॉय-स्काउट संस्था केवल खेल-तमाशे की चीज़
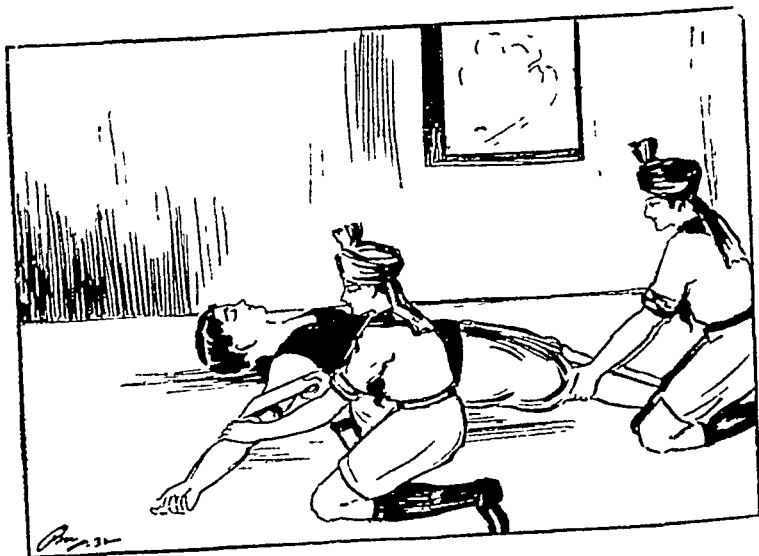
बॉय स्काउट

बॉय स्काउट का पट्टी बाँधना

नहीं है। यह आधुनिक शिक्षा का एक अङ्ग है। इसमें मनबहलाव के साथ-साथ लड़कों को बड़े काम की बातें बताई जाती हैं। उनको आरम्भ से ही अच्छे आचरण रखने की शिक्षा दी जाती है। उन्हें सत्य से प्रेम करना और सेवा-धर्म सिखलाया जाता है। उन्हें यह बतलाया जाता है कि उनका जीवन निर्बलों, अनाथों और अबलाओं की सेवा के लिए है। साधारण जीवन व्यतीत करना, अपने शरीर और मन को शुद्ध और बली बनाए रखना, अपने बड़ों का, अपने समाज का, अपने राज्य का और अपनी मातृ-भूमि का सम्मान करना उनका धर्म है। आज्ञा पालने के लिए वे सदा तैयार रहते हैं। ये सब और बहुत सी काम की बातें वे खेल-कूद में ही सीख लेते हैं।

जब कोई लड़का स्काउट होता है, तो उसे एक प्रतिज्ञा करनी पड़ती है। सब स्काउट्स बड़े समारोह के साथ जमा होते हैं और वह नया स्काउट उन लोगों के सामने कहता है:--

अपनी मान-मर्यादा से प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं:--

(१) ईश्वर, सम्राट् और अपनी मातृ-भूमि के प्रति अपना कर्त्तव्य पालन करूँगा।

(२) दूसरों की सेवा करता रहूँगा।

(३) स्काउट का जो धर्म है, उसका पालन करूँगा।

स्काउट-धर्म का पालन करना केवल स्काउट्स के लिए ही नहीं, वरन् सब लड़कों के लिए उचित और लाभदायक है। आप समझ सकते हैं कि ऐसी उपयोगी संस्था से हमें क्या-क्या लाभ हैं। लड़कियों की भी ऐसी ही एक संस्था है। उसे "गर्ल गाइड्स" कहते है। इन संस्थाओं से बालक-बालिकाओं का ही नहीं, वरन् हमारे देश और जाति का बड़ा उपकार हो रहा है।

— एक स्काउट

प्रश्न

१—बॉय-स्काउट संस्था का संक्षिप्त इतिहास बतलाओ।

२—स्काउट क्या प्रतिज्ञाएँ करता है?

३—सब लड़कों को स्काउट-धर्म पालन करना उचित क्यों है?

४—स्काउट-संस्था का सङ्गठन बतलाओ।

५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बतलाओ और उनका वाक्यों मे प्रयोग करो—

स्काउट, जीवन-कहानी, स्थापित करना, भाग लेना, अनुभव, उच्चकोटि, समुदाय, मनबहलाव, मानमर्यादा।

६—निम्न-लिखित वाक्य में कर्त्ता कारकों को बताओ—

सर राबर्ट बेडेन पावेल ने यह संस्था इस विचार से स्थापित की कि समय पड़ने पर लड़के अपनी वीरता दिखा सकें।

साहित्य-संग्रह

दशहरे का त्योहार

१५—दशहरा

आ गया प्यारा दशहरा छा गया उत्साह बल।
मातृपूजा, शक्तिपूजा, वीरपूजा है विमल॥ १॥
हिन्द में यह हिन्दुओं का विजय-उत्सव है ललाम।
शरद की इस सुऋतु में है खड्गपूजा धाम-धाम॥ २॥
दिखने लगे खञ्जन यहाँ, रहने लगे चकवा अशोक।
चल पड़े योगी यती मग की मिटी सब रोक-टोक॥ ३॥
भरने लगे बाज़ार हैं, खुलने लगे व्यापार-द्वार।
सजने लगे सेना नृपति बजने लगे बाजे अपार॥ ४॥
यह दशहरा क्षत्रियों का प्राण-जीवन पर्व है।
हिन्द के इतिहास में इस पर्व का अति गर्व है॥ ५॥
वीर पुरुषों को यही संजीवनी का काम दे।
जीत दे फिर कीर्ति दे फिर मान दे धन-धाम दे॥ ६॥
थी विजय-दशमी यही जब राम ने दल साजकर।
गिरि प्रवर्षण से चढ़ाई की थी लङ्का राज पर॥ ७॥
मार रावण को वहाँ उद्धार सीता का किया।
और लङ्का का विभीषण को तिलक था दे दिया॥ ८॥
उस समय से इस दशहरे का बड़ा सम्मान है।
मान गुण का यह प्रवर्तक क्षत्रियों का प्राण है॥ ९॥
श्रेय विजया से भरे इतिहास के बहु पत्र हैं।

आज भी प्रतिबिम्ब उसका देखते हम अत्र हैं ॥ १० ॥

—सैयद अमीरअली (मीर)

प्रश्न

१—दशहरा कौन ऋतु में होता है ? उसका वर्णन करो।
२—दशहरा क्षत्रियों का त्योहार क्यों माना जाता है ?
३—श्रीरामचन्द्रजी ने दशहरे पर क्या किया था ?
४—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—

शक्तिपूजा, ललाम, पर्व, संजीवनी, उद्धार करना, श्रेय, प्रतिबिम्ब और इतिहास।

५—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पद्य में जो-जो कर्ता कारक आए हैं, उनके नाम बताओ।

१६—पाताल-प्रविष्ट पांपियाई नगर

किसी समय विसूवियस पहाड़ के पास इटली में पांपियाई नाम का एक नगर था। रोम के बड़े-बड़े आदमी इस रमणीय नगर में अपने जीवन का शेषांश व्यतीत करते थे। हरएक मकान चित्रकारियों से विभूपित था। इन्द्र-धनुप के समान तरह-तरह के रंगों से रँगी हुई दुकानें नगर की शोभा को और भी बढा रही थीं। हर सड़क के छोर पर छोटे-छोटे तालाब थे, जिनके

किनारे भगवान् सूर्य के ताप को निवारण करने के लिए यदि कोई पथिक थोड़ी देर के लिए बैठ जाता तो उसके आनन्द का पार न रहता था। जब लोग रंग-बिरंगे कपड़े पहने हुए किसी स्थान पर जमा होते, तब बड़ी चहल-पहल दिखाई देती थी।

कोई-कोई संगमरमर की चौकियों पर, जिन पर धूप से बचने के लिए परदे टँगे हुए थे, बैठे दिखाई पड़ते थे। उनके सामने सुसज्जित मेजों पर नाना प्रकार के स्वादिष्ठ भोजन रक्खे जाया करते थे। गुलदस्तों से मेज़ें सजी रहती थीं। यह कहना अधिक न होगा कि वहाँ का छोटे-से-छोटा मकान भी सुसज्जित महलों को मात करनेवाला था। वहाँ का झोपड़ा भी महल नहीं, स्वर्ग था।

यहाँ पर हम केवल एक ही मकान का थोड़ा-सा हाल लिखते है। उससे ज्ञात हो जायगा कि पांपियाई उस समय उन्नति के कितने ऊँचे शिखर पर था। पांपियाई में घुसते ही एक मकान दिखाई देता था। उसकी बाहरी दालान रमणीय खम्भों पर सधी हुई थी। दालान के भीतर एक लम्बा-चौड़ा कमरा मिलता था। वह एक प्रकार का खजाना था। उसमें लोग अपना-अपना बहुमूल्य सामान जमा करते थे। वह

सामान लोहे और ताँबे के सन्दूकों में रक्खा रहता था। सिपाही चारों तरफ पहरा दिया करते थे। रोमन देवताओं की पूजा भी इसी में हुआ करती थी।

इस कमरे के बराबर एक और भी कमरा था। इसमें मेहमान ठहराए जाते थे। उसी में कचहरी थी। इससे भी बढ़कर एक गोल कमरा था, उसके फ़र्श में संग-मरमर और संगमूसा का पच्चीकारी का काम था। दीवारों पर उत्तमोत्तम चित्र अंकित थे। इस कमरे में पुराने इतिहास और राज्य-संबंधी कागजात रहते थे। यह कमरा बीच से लकड़ी के परदों से दो भागों में बँटा हुआ था। दूसरे भाग में मेहमान लोग भोजन करते थे।

इसके बाद देखनेवाला यदि दक्षिण की तरफ़ मुड़ता, तो एक और बहुत बड़ा सजा हुआ कमरा मिलता, उसमें सोने का प्रबंध था। कोचें बिछी हुई थीं। उन पर तीन-तीन फीट ऊँचे रेशमी गद्दे पड़े रहते थे। इसी कमरे में दीवार के किनारे-किनारे अलमारियाँ लगी थीं। उनमें बहुमूल्य रत्न और प्राचीन काल की अन्यान्य आश्चर्यजनक चीजें रक्खी रहती थीं। इस मकान के चारों तरफ एक बड़ा ही मनोहर बगीचा था। जगह-जगह पर फौवारे अपने जल-बिन्दु बरसाते थे। उनकी बूँदें भूमि पर गिर-गिरकर बड़ा ही मधुर

शब्द करती थीं। फौवारों के किनारे-किनारे अनेक कलियों से परिपूर्ण लताएँ शरद् ऋतु की चाँदनी का आनंद देती थीं। फौवारों के कारण दूर-दूर तक की वायु शीतल रहती थी। जहाँ-तहाँ सघन वृक्षों की कुंजें थीं।

आगे चलकर गर्मियों में रहने के लिए एक मकान था। पाठक, कृपा करके इसके भी दर्शन कर लीजिए, इसकी सजावट अपूर्व थी। इसमें जो मेजें थीं, वे देवदारु की सुगन्धित लकड़ी की थीं। उन पर चाँदी-सोने के तारों से तारकशी का काम था। सोने-चाँदी की रत्नजटित कुर्सियाँ भी थीं। उन पर रेशमी झालरदार गद्दियाँ पड़ी थीं। कभी-कभी मेहमान लोग इसमें भी भोजन करते थे। भोजन के बाद वे चाँदी के बरतनों में हाथ धोते थे। इसके बाद बहुमूल्य शराब सोने के प्यालों में उड़ती थी। अन्त में नृत्य आरम्भ होता था और गुलाब-जल की वृष्टि होती थी। ये सब बातें अपनी हैसियत के मुताबिक सभी के यहाँ होती थीं। त्योहार पर तो सभी ऐसा करते थे।

एक दिन कोई त्योहार मनाया जा रहा था। वृद्ध, युवा, बालक, स्त्रियाँ सभी आमोद-प्रमोद में मग्न थे। इतने में अकस्मात् विसूवियस-नामक पर्वत से धुआँ

निकलता दिखाई दिया । शनैः-शनैः धुएँ का गुबार बढ़ता गया । यहाँ तक कि तीन घंटे दिन रहे ही चारों ओर अन्धकार छा गया । सावन भादों की काली रात-सी हो गई । हाथ को हाथ न सूझ पड़ने लगा । लोग हाहाकार मचाने और त्राहि-त्राहि करने लगे । जान पड़ा कि प्रलय आ गया । जहाँ पहले धुआँ निकलना शुरू हुआ था, वहाँ से चिनगारियाँ निकलने लगीं ।

लोग भागने लगे; परन्तु भागकर जाते भी तो कहाँ! ऐसे समय में निकल भागना असम्भव था । ऐसा घनघोर अन्धकार था कि भाई बहन से, स्त्री पति से, मा बच्चों से बिछुड़ गई । हवा बड़े वेग से चलने लगी । भूकम्प हुआ । मकान धड़ाधड़ गिरने लगे । समुद्र में चालीस-चालीस गज ऊँची लहरें उठने लगीं । वायु भी गर्म मालूम होने लगी और धुआँ इतना भर गया कि लोगों का दम घुटने लगा । इस महा-घोर संकट से बचाने के लिए लोग ईश्वर से प्रार्थना करने लगे; पर सब व्यर्थ हुआ ।

कुछ देर में पत्थरों की वर्षा होने लगी और, जैसे भादों में गंगाजी उमड़ चलती हैं, वैसे ही गर्म पानी की तरह पिघली हुई चीजें उस ज्वालामुखी पर्वत से बह

निकलीं—उन्होंने पांपियाई का सर्वनाश आरंभ कर दिया। मेहमान भोजनगृह में, स्त्री पति के साथ, सिपाही अपने पहरे पर, कैदी कैदखाने में, बच्चे पालने में, दुकानदार तराज़ू हाथ में लिये ही रह गए। जो मनुष्य जैसी दशा में था, वह उसी दशा में रह गया।

बहुत समय के बाद, शांति होने पर, अन्य नगर-निवासियों ने वहाँ आकर देखा, तो सिवा राख के ढेर के और कुछ न पाया। वह राख का ढेर खाली ढेर न था; उसके नीचे हजारों मनुष्य अपनी जीवन-यात्रा पूरी करके सदैव के लिए सो गए थे।

हाय, किस-किस के लिए कोई अश्रु-पात करे। यह दुर्घटना २३ अगस्त ७९ ईसवी की है। १६४५ वर्ष बाद जब वह जगह खोदी गई, तब जो वस्तु जहाँ थी, वहीं मिली।

यह प्रायः सारा का सारा शहर पृथ्वी के पेट से खोद निकाला गया है। अब भी कभी-कभी उसमें यहाँ-वहाँ खुदाई होती है और अजीब-अजीब चीज़ें निकलती हैं। पांपियाई मानों दो हजार वर्ष के पुराने इतिहास का चित्र हो रहा है। दूर-दूर से दर्शक उसे देखने जाते हैं।

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

प्रश्न

१—विसूवियस कहाँ है ?

२—पांपियाई नगर का वर्णन करो ।

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

ताप, पथिक, अन्यान्य, आमोद-प्रमोद, त्राहि-त्राहि, उमड़ जाना, जीवन-यात्रा पूरी करना, दुर्घटना और भूकम्प ।

४—निम्न-लिखित वाक्य में कर्ता और कर्मकारक बताओ—

इन्द्रधनुष के समान तरह-तरह के रंगों से रँगी हुई दुकानें नगर की शोभा को और भी बढ़ा रही थी ।

१७—अछूत की आह

एक दिन हम भी किसी के लाल थे,
आँख के तारे किसी के थे कभी ।
बूँद भर गिरता पसीना देखकर,
था बहा देता घड़ों लोहू कोई ॥ १ ॥
देवता देवी अनेकों पूजकर,
निर्जला रहकर कई एकादशी ।
तीरथों में जा द्विजों को दान दे,
गर्भ में पाया हमें मा ने कहीं ॥ २ ॥

जन्म के दिन फूल की थाली बजी,
दुःख की रातें कटीं सुख दिन हुआ।
प्यार से मुखड़ा हमारा चूमकर,
स्वर्ग सुख पाने लगे माता-पिता ॥ ३ ॥
हाय! हमने भी कुलीनों की तरह,
जन्म पाया प्यार से पाले गए।
जी बचे फूले-फले तब क्या हुआ,
कीट से भी नीचतर माने गए ॥ ४ ॥
नाथ! तुमने ही हमें पैदा किया,
रक्त मज्जा मांस भी तुमने दिया।
ज्ञान दे मानव बनाया फिर भला,
क्यों हमें ऐसा अपावन कर दिया ॥ ५ ॥
जो दयानिधि कुछ तुम्हें आए दया,
तो अछूतों की उमड़ती आह का।
यह असर होवे कि हिन्दुस्तान में,
पाँव जम जावे परस्पर प्यार का ॥ ६ ॥

—रामचन्द्र शुक्ल

प्रश्न

१—अछूतों में और कुलीनों में क्या कुछ ईश्वर ने भेद किया है?

२—हमे अछूतपन दूर करने के वास्ते क्या काम करने चाहिए?

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—

आँख के तारे, द्विज, गर्भ, कीट, उमड़ना और पाँव जम जाना।

४—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पद्य के लाल, तारे और कोई तथा तृतीय पद्य के प्यार और सुख शब्दों के कारकों को बताओ।

१८—रानी दुर्गावती

दुर्गावती महोबे के चन्देल राजा शालिवाहन की पुत्री थी। उसका विवाह गढ़-मण्डला के गोंड-राजा दलपति शाह के साथ हुआ था। विवाह के कुछ ही समय बाद वह विधवा हो गई। इस कारण सब राज-काज उसी को सँभालना पड़ा; क्योंकि उसका पुत्र वीरनारायण अभी बच्चा था।

दुर्गावती के राज्य में प्रजा सब भाँति सुखी थी। न तो रानी और न कोई और ही दीनों को दुःख देता था। यदि कोई देता भी था, तो रानी ऊँच-नीच का विचार न कर उसे दण्ड देती थी। वह शस्त्र-विद्या में बड़ी निपुण थी और पराक्रमी भी खूब थी। लड़ाई में सेना के साथ स्वयं जाती थी और हाथी पर सवार होकर—या जैसा भी अवसर हो—लड़ती थी। उसने

महारानी दुर्गावती

इधर-उधर के कई देश जीतकर अपने राज्य में मिला लिये थे।

जिस देश में इस प्रकार सुख और शान्ति रहे, वहाँ धन की क्या कमी ? छोटे और बड़े सभी चैन की बंसी बजाते थे, कोई भूखा न सोता था और न किसी को किसी वस्तु के लिए तरसना पड़ता था। परन्तु प्रजा का यह सुख बहुत दिनों तक न रहा ; क्योंकि बादशाह अकबर ने जब गढ़-मण्डला की दौलत और रानी की प्रशंसा सुनी, तब उसने आसफखाँ को पचास हजार सवार और सिपाही और बहुत-सी तोपें देकर दुर्गावती से युद्ध करने के लिए भेजा।

भला रानी कब डरनेवाली थी ? वह भी सात सौ हाथी और पचास हज़ार योधा लेकर मैदान में आ डटी। जब लड़ाई हुई, तब रानी ने अनोखी वीरता दिखाई। परिणाम यह हुआ कि खाँसाहब के सिपाहियों के पैर उखड़ गए और वे लड़ाई से भाग खड़े हुए।

दूसरे दिन खाँसाहब ने फिर हमला किया। उनकी तोपें आग उगलने लगीं। बेचारी रानी के पास तोपखाना था नहीं, तो भी उसने बड़ा साहस दिखलाया। तोपों की भयंकर मार से जब उसके सिपाही भागने लगे, तब उसने उनको बड़ा धिक्कारा। कायरों के भाग

जाने पर कुछ चुने हुए वीर बच रहे। उनको साथ लेकर रानी ने बादशाही फौज से खूब मोर्चा लिया। बालक वीरनारायण ने भी कई बार शत्रुओं के दाँत खट्टे किए और उन्हें दूर तक खदेड़ा। अन्त में बादशाही फौज ने उस बेचारे को चारों ओर से घेरकर घायल कर दिया। अपने घायल और बेहोश पुत्र को देखकर रानी हर्ष से गद्गद हो गई और दूने साहस से युद्ध करने लगी।

इस समय उसके साथ केवल ढाई तीन सौ वीर रह गए थे। कहाँ ये थोड़े से योधा और कहाँ शत्रु के हजारों सिपाही! लड़ते-लड़ते रानी की आँख और गर्दन में एक-एक तीर लगा। उसके कई एक योधाओं ने इस समय उसे किले में चले जाने की सलाह दी; परन्तु रानी ने कहा कि युद्ध में पीठ दिखाना क्षत्रियों का धर्म नहीं है। वह वहीं डटी रही। अन्त में जब उसने देखा कि अब विजय की आशा करना व्यर्थ है, तब हाथी हाँकने का अंकुश लेकर अपने पेट में मार लिया और प्राण छोड़ दिए! इस समय उसके पास छः वीर रह गए थे, जो अपनी जान हथेली पर रखकर बादशाही सेना पर टूट पड़े और अनेक शत्रुओं को मारते हुए स्वर्ग को सिधारे।

दुर्गावती के मारे जाने पर आसफ़खाँ ने क़िले को

चारों ओर से घेर लिया। बालक वीरनारायण दो महीने तक बड़ी वीरता के साथ किले की रक्षा करता रहा। अन्त में मारा गया। उसके मरते ही बचे खुचे राजपूत मरने का विचार करके किले से बाहर निकल आए और बादशाही फ़ौज से भिड़ गए। उधर किले में स्त्रियों ने बहुत-सा सामान इकट्ठा करके उसमें आग लगा ली और बच्चों समेत उसी आग में जल मरीं। इधर एक भी राजपूत जीता न बचा। यों गढ़-मण्डला का राज अकबर के हाथ आया।

—बदरीनाथ भट्ट

प्रश्न

१—रानी दुर्गावती के गुणों का वर्णन करो।

२—रानी दुर्गावती के राज्यकाल में प्रजा की क्या दशा थी?

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ लिखो और वाक्यों मे उनका प्रयोग करो—

चैन की बंसी बजाना, मोर्चा लेना, ऊंच-नीच का विचार न करना, दाँत खट्टे करना, हर्ष से गद्गद होना, जान हथेली पर रखना।

४—अपने घायल और बेहोश पुत्र को देखकर रानी हर्ष से गद्गद हो गई।

उपर्युक्त वाक्य में पुत्र, रानी और हर्ष शब्दों के कारकों को बताओ।

१६—स्वर्गीय संगीत

नर हो, न निराश करो मन को ।

कुछ काम करो कुछ काम करो,
जग में रह के कुछ नाम करो ।
यह जन्म हुआ किस अर्थ अहो,
समझो जिसमें यह व्यर्थ न हो ।
कुछ तो उपयुक्त करो तन को,
नर हो, न निराश करो मन को ॥ १ ॥

सँभलो कि सुयोग न जाय चला ।
कब व्यर्थ हुआ सदुपाय भला ?
समझो जग को न निरा सपना,
पथ आप प्रशस्त करो अपना ।
अखिलेश्वर है अवलम्बन को,
नर हो, न निराश करो मन को ॥ २ ॥

निज गौरव का नित ज्ञान रहे,
"हम भी कुछ हैं" यह ध्यान रहे ।
सब जाय अभी, पर मान रहे,
मरणोत्तर गुञ्जित गान रहे ।
कुछ हो, न तजो निज साधन को,
नर हो, न निराश करो मन को ॥ ३ ॥

प्रभु ने तुमको कर दान किए,
सब वांछित वस्तु-विधान किए।
तुम प्राप्त करो उनको न अहो,
फिर है किसका यह दोष कहो?
समझो न अलभ्य किसी धन को,
नर हो, न निराश करो मन को॥ ४॥

किस गौरव के तुम योग्य नहीं?
कब कौन तुम्हें सुख भोग्य नहीं?
जन हो तुम भी जगदीश्वर के,
(सब हैं जिसके अपने घर के)।
फिर दुर्लभ क्या उसके जन को?
नर हो, न निराश करो मन को॥ ५॥

करके विधिवाद न खेद करो,
निज लक्ष्य निरन्तर भेद करो।
बनता बस उद्यम ही विधि है,
मिलता जिससे सुख का निधि है।
समझो धिक निष्क्रिय जीवन को,
नर हो, न निराश करो मन को॥ ६॥

—मैथिलीशरण गुप्त

२—विधिवाद किसे कहते हैं ?

३—उपर्युक्त पद्यों को कण्ठस्थ करो और निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

उपयुक्त, सुयोग, प्रशस्त, अवलम्बन, गुंजित, वांछित, अलभ्य, निष्क्रिय और निधि।

४—उपर्युक्त पाठ के चौथे पद्य में जो-जो संज्ञाएँ और सर्वनाम आए हैं, उनके कारकों को बतलाओ।

२०—अतिथि-सत्कार

महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में, जो यज्ञशाला तय्यार की गई थी, उसके खंभे सोने-चाँदी के बनाए गए थे और उनकी शोभा बढ़ाने के लिए उनमें भाँति-भाँति के रत्न जड़े गये थे। रेशमी वस्त्रों तथा मोतियों की झालरें लगा-लगाकर यज्ञशाला सुसज्जित की गई थी और यहाँ-वहाँ अशर्फियों, रुपयों तथा अमूल्य रत्नों की राशियाँ इसलिए लगाई गई थीं कि जिसके मन में आए, वह मनमानी सम्पत्ति निश्शङ्क ले जाय; कोई रोकनेवाला न था। इस यज्ञ में काम आनेवाले पात्र, स्तम्भ आदि सब स्वर्णमय तथा रत्न-जटित थे और महाराज युधिष्ठिर की अपार धन-सम्पत्ति तथा वैभव के परिचायक थे।

इस यज्ञ में एक अपूर्व नेवला भी आया था, जिसका आधा शरीर सोने का था। इस ऐश्वर्य को देखकर वह अद्भुत जीव कहने लगा कि "हाँ, धन-सम्पत्ति की कमी तो नहीं है और उदारता भी अच्छी दिखाई देती है; पर यह सब आडम्बर उस अतिथि-सेवक ब्राह्मण के मुट्ठी भर आटे के बराबर भी नहीं है।" इस विचित्र कथन को सुन और उस विचित्र नेवले को देख सारी सभा चकित हो गई और बड़ी उत्सुकता के साथ लोगों ने उससे प्रश्न किया कि "तुम्हारे इस कथन का अर्थ क्या है?" इस पर उसने आदर्श आतिथ्य की निम्न-लिखित कथा कही—

एक ब्राह्मण खेतों में जाकर जौ बीन लाता और उसी को पीसकर उसकी ब्राह्मणी आटा तय्यार करती थी। उसी आटे को मुट्ठी-मुट्ठी दिन में एक बार खाकर वह ब्राह्मण, उसकी स्त्री, पुत्र और पुत्र-वधू चारों प्राणी अपना निर्वाह किया करते थे। इसी से अनुमान किया जा सकता है कि वे कैसे दरिद्र थे। कहावत है कि "आपत्ति में आपत्ति आती है", सो भीषण दुर्भिक्ष पड़ने से इनका जीवन-निर्वाह और भी अधिक कष्ट-कर हो गया। दिन-दिन भर भटकने पर भी ये इतना अन्न एकत्र न कर सकते थे कि आधा पेट भी भरके

रह सकें। निदान बहुत दिन अधपेट रहने से इनके शरीरों पर निरी हड्डियाँ और चमड़ा रह गया और थोड़ा सा भी जौ एकत्र करने की शक्ति इनमें न रह गई। बेचारे बड़े ही कष्ट से अपना निर्वाह कर रहे थे।

एक दिन वह दीन ब्राह्मण दिन भर के परिश्रम से थोड़े से जौ बीनकर घर लाया। ब्राह्मणी ने उन्हें पीसकर ४ भाग किए और सबको बाँट दिए। वे परम सन्तोषी इस मुट्ठी भर पिसान के लिए परमेश्वर को धन्यवाद देते हुए सहर्ष खाने को बैठे। इसी समय उन लोगों ने बाहर किसी की आहट सुनी और देखने पर उन्हें मालूम हुआ कि अतिथि द्वार पर खड़ा है। उसे देख ब्राह्मण उठकर पास गया और नम्रता-पूर्वक भीतर लाकर उससे जलपान करने के लिए निवेदन किया। अतिथि महाराज कहते ही पैर धुलाकर कुशा-शन पर आ बैठे और ब्राह्मण ने अपना भाग उनके सम्मुख हर्ष से रख दिया। अतिथि बात की बात में वह मुट्ठी भर पिसान फाँक गया।

तब ब्राह्मणी अपना भाग लेकर आई। ब्राह्मण ने उससे कहा—

ब्राह्मण—नहीं, बचुवा की मा, तुम अपना भाग मत दो। तुम बहुत निर्बल हो रही हो, यदि तुम भूखी

रह गई, तो न जाने क्या का क्या हो जाय और मेरा घर सदा के लिए अँधेरा पड़ जाय।

ब्राह्मणी—नहीं, महाराज, आप यह क्या कहते हैं? फिर धर्म कहाँ रहेगा? क्या इन प्राणों से धर्म-विमुख हो जाऊँ? यह असम्भव है। आप मेरा भाग अतिथि को अवश्य दे दीजिए। एक दिन न खाने से मैं मरी थोड़े ही जाती हूँ और यदि मर भी जाऊ तो धर्म तो बचेगा।

उस बेचारे ब्राह्मण ने ऊँची साँस लेकर अपनी स्त्री का भाग भी अतिथि के सामने रख दिया और उसे भी वह तुरन्त ही फाँक गया; पर इस पर भी उसकी क्षुधा तृप्त न हुई। यह देख ब्राह्मण का पुत्र अपना भाग ले आया और पिता ने दिल कड़ा करके वह भी अतिथि के सामने रख दिया। इसे भी अतिथि महाराज फाँक गए; पर तृप्ति न हुई।

यह देख ब्राह्मण की बहू अपना भाग देने लगी। तब ब्राह्मण के हृदय पर वज्र की सी चोट लगी और वह अश्रुपात करते हुए कहने लगा—

ब्राह्मण—बेटी! यह क्या? तेरी यह अवस्था और इस तरह फाक़ा। यदि तू भूखी रही, तो अवश्य ही प्राण खो बैठेगी। तू अपना भाग रहने दे।

बहू—नहीं दादाजी! आप मुझे इस पुण्य से क्यों वञ्चित रखते हैं? अतिथि देव-तुल्य होता है। उसे भोजन कराने में बड़ा पुण्य है, सो मुझे इस पुण्य से वञ्चित न कीजिए।

धर्म के लिए इतनी श्रद्धा देख ब्राह्मण अपनी बहू का वचन न टाल सका और मन ही मन दुःखित होता हुआ, पर ऊपर से हर्ष प्रकट करता हुआ, बहू के भाग को भी अतिथि के सम्मुख रख आया। वह उसे भी फाँक जल पीकर खड़ा हो गया। उसके खड़े होते ही घर उजियाले से चमक उठा और अतिथि ने अपने को साक्षात् धर्मराज कहकर प्रकट किया।

फिर नेवले ने कहा कि उस दिन ब्राह्मण-कुटुम्ब को इतनी बड़ी आपत्ति सहकर भी अपनी धर्मरक्षा करने से जो फल मिला सो तो मिला, पर उस अतिथि के गिरे हुए जौ के कणों पर लोट जाने से मेरा आधा शरीर भी कंचनमय हो गया। इसी से मैंने कहा कि उस ब्राह्मण-कुटुम्ब के उस अपूर्व त्याग की तुलना में यह त्याग पासंग भी नहीं है। धन्य है, उस ब्राह्मण-कुटुम्ब का त्याग से भरा हुआ आतिथ्य, जिसका फल आप मेरे शरीर में देख रहे हैं।

—रामप्रसाद द्विवे

प्रश्न

—अतिथि और आतिथ्य से क्या समझते हो ?

—युधिष्ठिर का राजसूय यज्ञ ब्राह्मण के आतिथ्य के बराबर क्यों नहीं था ?

—ब्राह्मण ने क्या अपूर्व त्याग किया था ?

—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ लिखो और उनको वाक्यों में प्रयोग करो—

यज्ञशाला, झालर, निश्शङ्क, अपार, परिचायक, आडम्बर, उत्सुकता, आतिथ्य, पिसान, धर्मविमुख होना, तृप्ति होना, वंचित रखना, अपूर्व त्याग और पासंग।

—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पैरा में जो-जो सम्बन्ध कारक अव्यय आए हैं, उन्हें बताओ।

—नीचे लिखे शब्दों के रूप कर्ता, कर्म, सम्प्रदान और सम्बन्ध कारकों में लिखो—

युधिष्ठिर, ब्राह्मण, धर्म, अतिथि और शरीर।

२१—फूल और काँटा

हैं जनम लेते जगह में एक ही।
एक ही पौधा उन्हें है पालता॥
रात में उन पर चमकता चाँद भी।
एक ही सी चाँदनी है डालता॥ १॥
मेह उन पर है बरसता एक सा।
एक सी उन पर हवाएँ है वही॥

पर सदा ही यह दिखाता है हमें।
ढङ्ग उनके एक से होते नहीं ॥ २ ॥
छेदकर काँटा किसी की उँगलियाँ।
फाड़ देता है किसी का वर वसन ॥
प्यार-डूबी तितलियों का पर कतर।
भौंर का है वेध देता श्याम तन ॥ ३ ॥
फूल लेकर तितलियों को गोद में।
भौंर को अपना अनूठा रस पिला ॥
निज सुगन्धों औ निराले रंग से।
है सदा देता कली जी की खिला ॥ ४ ॥
है खटकता एक सबकी आँख में।
दूसरा है सोहता सुर-सीस पर ॥
किस तरह कुल की बड़ाई काम दे।
जो किसी में हो बड़प्पन की कसर ॥ ५ ॥

—अयोध्यासिंह उपाध्याय

प्रश्न

१—फूल और काँटे किन-किन बातों में समान हैं और उनमें क्या अन्तर है ?
२—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ—
वसन, श्याम, बेधना, आँख में खटकना, सुर और कसर।
३—इस पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?

४—क्या भारतवर्ष में ऐसे उदाहरण हैं कि कुल की बड़ाई के भरोसे लोग अपने को बड़ा मानते हों ?
५—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पद्य में जो-जो अधिकरण कारक आए हैं, उन्हें बताओ।

२२—जलवर्षक वृक्ष

जिस ईश्वर ने सूर्य से अग्नि और चन्द्र से शीतल ज्योति और समुद्र और स्थल की रचना की है, उसने अपनी जल और थलरूपी पशुशाला के पालतू जीवधारियों के लिए ऐसी आवश्यक चीज़ें भी बना दी हैं, जिनको देख प्राणियों में सबसे बुद्धिमान् मनुष्य की भी बुद्धि काम नहीं करती। जहाँ पानी का नाम नहीं, वहाँ उसने तरबूज सा फल और जानवरों के पेट में पानी की थैली बनाई; जहाँ गर्मी है, वहाँ रोम-रहित और जहाँ शीत है, वहाँ बड़े रोमवाले पशु बनाए; जहाँ दिन होता ही नहीं वहाँ स्वयं-प्रकाश इत्यादि की उत्पत्ति की। उस दयालु कारीगर की कौन-कौनसी बात गिनाई जाय ? उन्हीं में से हम आज एक का हाल सुनाना चाहते हैं, जिसे कम लोग जानते होंगे।

प्राचीन काल में एटलांण्टिक समुद्र के फेरो टापू में न पानी ही बरसता था और न किसी प्रकार का वहाँ जला-

शय—नदी, नाला, तालाब आदि ही था; और न वहाँ के रहनेवाले कुआँ या तालाब खोदकर जल निकालना ही जानते थे। ऐसी दशा में जल, जो प्राणियों का जीवन कहलाता है, उसके बिना जीवधारियों का जीते रहना बिलकुल असम्भव हो जाता। पर ऐसा नहीं था। संसार की फुलवाड़ी के उस भाग पर भी जानवर रहते थे। वहाँ एक प्रकार के पेड़ थे, जो जल बरसाने वाले वृक्ष कहे जाते थे। उन्हीं से बहुत जल मिलता था और टापू के निवासियों का सारा काम उन्हीं से चलता था। यात्रियों ने उनका दर्शन किया और वृत्तान्त भी लिखा है।

अङ्गरेज यात्री मिस्टर लूईस जैकसन ने उस अद्भुत वृक्ष के विषय में यों लिखा है—

"वह वृक्ष शोक, सिन्दूर, बलूत के समान मोटा, ४०-४८ फीट ऊँचा और डालियों वाला होता है। नारियल के समान उसकी पत्तियाँ होती हैं, ऊपरी तल श्याम और भीतरी श्वेत। उसमें न तो फूल लगते हैं और न फल ही। दिन को पत्तियाँ सूरज की कड़ी किरनों से झुलस जाती हैं; पर रात को उनसे पानी की बूँदें टपकने लगती हैं। हर रात को उसके सिर पर बादल की टोपी देखकर अचरज होता है। यह अचरज उस समय और

भी बढ़ जाता है, जब देखते हैं कि पानी, जो जड़ के पास इकट्ठा होकर बहने लगता है, उस बादल से नहीं आता, बरन् पेड़ से पसीजता अर्थात् पसीना-सा छूटता है। बहुत जाँच के अनन्तर यह निश्चित किया गया है कि प्रति पेड़ से एक रात में मनों पानी निकलता है !!"

वे वृक्ष टापू भर में छिटके थे। उनसे निकला हुआ जल १५० मील के घेरे में टापू के रहनेवाले नर-नारी और पशुओं की आवश्यकता को पूरा करता था। जैकसन साहब इस भाँति उसका वर्णन समाप्त करते हैं—"यदि मैंने अपनी आँखों उस पेड़ को न देखा होता, तो इस पर विश्वास न लाता।"

आठ सितम्बर सन् १८७७ के "इँगलिशमैन" समाचार-पत्र में लिखा है कि इस देश में सूखा बहुत पड़ने लगा है। हमारे सरकारी बगीचों के सुपरिंटेंडेंट लोगों को इस पेड़ की ओर ध्यान देना चाहिए, जिसका ज्ञान पेरू देश के मोयोयाम्बा नगर के पास के जंगलों में हुआ है। अमेरिकावाले इसे "तामिया-कास्पी" अर्थात् जल-वर्षक वृक्ष कहते हैं। सुनते हैं कि अद्भुत वृक्ष वायु की नमी को खींच लेता है और अपनी डालियों तथा पत्तों से उसे पानी के रूप में बरसाता है, यहाँ तक कि पृथ्वी को पानी से भिगो डालता है। गरमी में जब नदियाँ घट

जाती हैं और जल दुर्लभ हो जाता है, उस समय उसकी यह शक्ति बहुत बढ़ जाती है। एक महाशय ने परीक्षा करके पेरू सरकार से निवेदन किया है कि कृषि के लाभ के लिए देश के सूखे भागों में इसके लगाने का प्रयत्न किया जाय।

—काशीप्रसाद जायसवाल

प्रश्न

१—जलवर्षक वृक्ष का संक्षेप में वर्णन करो।

२—इन वृक्षों से क्या लाभ है? अन्य देशों में इनके लगाने से क्या लाभ है?

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ—
उत्पत्ति, झुलस, पसीजना, वर्णन और निवेदन।

४—इस पाठ के अन्तिम वाक्य में जो-जो संज्ञाएँ आई हैं, उनके कारक बताओ।

५—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पैरे में जो-जो सर्वनाम आए हैं, उनको बताओ।

२३—भारत-माता

भारत-माता यही हमारी,
हैं यह हमको अतिशय प्यारी।
इसकी बार-बार बलिहारी,
तन मन धन सब इस पर वारी॥ १॥

शोभा-पुञ्ज हिमालय इसमें,
विन्ध्याचल उदयाचल इसमें।
इसमें मलयाचल आता है,
जग में सौरभ फैलाता है॥ २॥

गंगा-यमुना बहती इसमें,
सरस्वती लहराती इसमें।
इसमें सिन्धु सोनभद्रा हैं,
और चन्द्रभागा सिप्रा हैं॥ ३॥

लता, पत्र, फल, पुष्प यहाँ हैं,
हरे-भरे सब वृक्ष यहाँ हैं।
जड़ी-बूटियाँ बहुत यहाँ हैं,
सुखदायक सब वस्तु यहाँ हैं॥ ४॥

दिव्य अन्न है, निर्मल जल है,
सभी भाँति शोभित भू-तल है।
वायु यहाँ की अति हितकर है,
सकल पदार्थ-जाति सुखकर है॥ ५॥

लोहा, ताँबा, चाँदी, सोना,
मानिक, नीलम, हीरा, पन्ना।
स्थान-स्थान पर धरा हुआ है,
खानों भीतर भरा हुआ है॥ ६॥

रामकृष्ण की है यह माता,

द्रोण, भीष्म की है यह माता।
अर्जुन, विक्रम की यह माता,
शिव, प्रताप की है यह माता ॥ ७ ॥
राम, कृष्ण के भाई हैं हम,
द्रोण, भीष्म के भाई हैं हम।
अर्जुन, विक्रम के भाई हम,
इस नाते सबके भाई हम ॥ ८ ॥
इसमें जन्म लिये से पाया,
ऐसा पद हमने मन भाया।
करें सकल सुत ध्वनि सुखदाता,
जय जय जय जय भारत माता ॥ ९ ॥
इक तन इक मन हों सब भाई,
आओ मिल लें भाई भाई।
माता इससे सुख पावेगी,
लोकमान्य यह हो जावेगी ॥ १०

—गिरिधर शर्मा

प्रश्न

१—'भारत-माता' में क्या-क्या वस्तुएँ पाई जाती हैं ?
२—कौन-कौन महापुरुष यहाँ पैदा हुए हैं ?
३—हमारे कौनसे कार्य से भारत-माता लोकमान्य होगी

४—"बलिहारी होना, वार करना, दिव्य, हितकर और लोकमान्य" इन पदों और शब्दों के अर्थ बताओ और वाक्यों में इनका प्रयोग करो।

५—अर्जुन, विक्रम के भाई हम इस नाते सबके भाई हम। उपर्युक्त पद्य में 'हम' और 'सबके' किस प्रकार के सर्वनाम हैं?

२४—ज्ञान के लिए बलिदान

बालकों में से बहुत से जानते होंगे कि दक्षिणी ध्रुव कहाँ है। नक़शे या ग्लोब में नीचे की तरफ देखो दक्षिणी ध्रुव है। यहाँ हमेशा जाड़ा ही रहता है। यहाँ पर न ज़मीन है, न पानी। समुद्र की लहरें बर्फ़ के पहाड़ के सदृश हैं। चारों तरफ़ बर्फ़ ही बर्फ़ दिखाई देता है। यहाँ अँधेरा भी बहुत रहता है और कई महीने तक रात ही रहती है। इस स्थान पर आँधी भी बहुत चलती है। और ऐसे समय में बर्फ के टुकड़े इधर-उधर टूटते रहते है। जब आँधी आती है, हवा में इतनी ठंढक होती है कि किसी जीवधारी का वहाँ जीवित रहना कठिन है। ऐसे स्थान में कुछ वर्ष हुए इंगलैंड से पाँच आदमी गए थे। लड़के आश्चर्य से पूछेंगे कि ऐसे देश में इन लोगों के जाने की आवश्यकता ही क्या थी। जहाँ जीवधारी लोग न रहते हों,

जहाँ बर्फ़ की ज़मीन और बर्फ ही की आँधी चलती हो, वहाँ वे लोग किस लालच से गए ?

याद रखना चाहिए कि यह बात मनुष्य में स्वाभाविक है कि जितनी बातें उसके जानने योग्य हैं, उनको वह जाने। नए ज्ञान प्राप्त करने की रुचि मनुष्य-मात्र में पाई जाती है।

दूसरी बात यह भी जानने योग्य है कि संसार में बहुत से मनुष्यों में यह बात भी स्वाभाविक होती है कि अपने को खतरे में डालें। हम लोगों में बहुत से लोग कठिनाइयों का सामना करने से भागते हैं। परन्तु संसार में ऐसे लोग भी अनेक हैं कि जिनका साहस ज्यों-ज्यों उनकी कठिनाइयाँ बढ़ती जाती हैं, त्यों-त्यों बढ़ता जाता है।

तीसरी बात यह भी जानने योग्य है कि इस जगत् में जितने स्थान हैं, उन सबकी प्राकृतिक शोभा में विशेषता है। जिस देश में सर्वदा सर्दी रहती है, वहाँ के प्राकृतिक नियम ही विचित्र हैं। वैज्ञानिक का यह कर्त्तव्य है कि वह उन नियमों को जाने। बालको! यदि तुममें नए स्थानों के देखने की इच्छा, नए ज्ञान प्राप्ति के लिए उत्साह, कठिनाइयों का सामना करने में प्रेम और साहस के काम करने का हौसला उत्पन्न होगा,

तो निश्चय जानो कि तुममें से अनेक विद्वान् और यशस्वी होंगे।

इँगलैंड के जो पाँच वीर इस अज्ञात देश को जहाज पर रवाना हुए, उनके नाम ये थे—कप्तान स्काट, जो इनका नेता था, कप्तान ओट्स, लेफ़्टिनेन्ट बावर्स, डाक्टर विलसन और इवन्स। इनके अतिरिक्त जहाज में बहुत से नौकर-चाकर भी थे। जितनी दूर तक हो सका, वे लोग जहाज ले गए।

जब ये लोग ऐसे स्थान पर पहुँचे, जहाँ जहाज बर्फ में फँस गया, तब उन्होंने उसको छोड़ दिया और छोटी-छोटी गाड़ियों में बर्फ के रास्ते से ध्रुव की तरफ चले। वहाँ पहुँचकर अपनी पहुँच का चिह्न बना दिया। जितनी बातें वहाँ जानने की थीं, उनको जान भी लिया। तब वे वहाँ से इस आशा से फिरे कि जहाज पर पहुँचकर इँगलिस्तान लौटेंगे; परन्तु अब उनकी कठिनाइयाँ आरम्भ हुईं। सर्दी उनको आशा से अधिक हो गई और उसके साथ ही आँधी भी शुरू हो गई। चारों तरफ बर्फ तो थी ही, अब आकाश से भी बर्फ की वर्षा आरम्भ हो गई।

इवन्स, जो सबसे अधिक बलवान् था, बीमार पड़ा और ऊँची-नीची बर्फीली जगह पर ठोकर खाकर सिर

के बल गिरा और तुरन्त ही उसके प्राण निकल गए। इसके बाद कप्तान ओट्स, जो फौजी अफसर था, बीमार पड़ा। उसके हाथ-पैर की उँगलियाँ गलकर गिर गईं, जिसके कारण उसको भयानक पीड़ा हो रही थी। उससे चला नहीं जाता था; परन्तु फिर भी बर्फ पर अपना पैर घसीटता हुआ चलता ही रहा। उसने एक दिन भी आह नहीं की।

वह सर्वदा प्रसन्नचित्त और आशावान् था। जब उसकी पीड़ा बढ़ने लगी, तब उसको निश्चय हो गया कि वह अपने प्यारे देश को फिर नहीं लौटेगा। एक रात्रि को वह यह कहकर खेमे में सोया कि अब इस संसार में मैं नहीं जागूँगा, परन्तु दूसरे दिन वह जीवित था। उठते ही खेमे से उसने बाहर झाँककर देखा कि भयानक आँधी चल रही थी और हवा तीक्ष्ण तथा ठंढी थी। यह देखकर तुरन्त उसने अपने तीनों मित्रों से कहा कि मैं बाहर जाता हूँ और सम्भव है कि देर तक रह जाऊँ। वह जानता था कि मैं मरने जाता हूँ। उसके मित्र भी जानते थे कि अब वह नहीं लौटेगा। परन्तु वह यह नहीं चाहता था कि उसकी मृत्यु कप्तान स्काट और दो मित्रों के सामने हो। क्योंकि वह समझता था कि इससे उन तीनों को

अत्यन्त क्लेश होगा। ओट्स की वीरता संसार में विज्ञान के इतिहास में सदा स्मरणीय रहेगी।

उसके चले जाने के अनन्तर तीनों मित्रों को निश्चय हो गया कि अब उनका भी काल आ गया। स्काट ने अपना समय अपनी यात्रा का वर्णन लिखने में व्यतीत किया। उनके भोजन का सब सामान नष्ट हो गया था। वे समझते थे कि उनके पास इतना भोजन है कि जो इँगलैंड पहुँचने तक काम आएगा; परन्तु आँधी ने कुछ भी न छोड़ा। इतने पर भी इन साहसी पुरुषों ने अपना साहस नहीं त्यागा और धीरे-धीरे आगे बढ़ते ही गए। नौ दिन तक आँधी बराबर चलती रही। इस अवस्था का वर्णन स्काट के शब्दों में ही करना उचित होगा।

"हम लोग इतने निर्बल हो गए हैं कि लिखना कठिन है; परन्तु ऐसी यात्रा पर आने का कुछ भी शोक नहीं है। इस यात्रा ने हमें निश्चय करा दिया है कि अँगरेज लोग कठिनाइयों को सह सकते हैं, एक दूसरे की सहायता में सफल हो सकते हैं और मृत्यु का सामना अत्यन्त धैर्य के साथ कर सकते हैं। हमने अपने को खतरे में डाला। हम जानते थे कि हम अपने को खतरे में डाल रहे हैं। यहाँ आकर कुछ घटनाएँ ऐसी

हुई कि जिनसे हमारी कठिनाइयाँ और भी बढ़ गईं; परंतु इसकी हमको कोई शिकायत नहीं और हम परमेश्वर की इच्छा के सामने सिर झुकाते हैं, और अब भी इस बात की प्रतिज्ञा करते हैं कि अन्त समय तक धैर्य और साहस को नहीं छोड़ेंगे। परन्तु जब हम इस यात्रा में अपना जीवन स्वदेश के सम्मान के लिए प्रसन्नतापूर्वक देने को तैयार हैं, तो क्या हमारे स्वदेश-बन्धु हमारे कुटुम्बियों की सहायता और रक्षा न करेंगे? यदि हम लोग जीवित रहते, तो मैं अपने साथियों की सहनशीलता, वीरता और साहस की कहानी सुनाता, जो प्रत्येक अँगरेज-बच्चे के हृदय को हिला देती; परन्तु मेरा यह अधूरा लेख और हमारे मरे हुए शरीर इस कहानी को सुनाएँगे और निश्चयपूर्वक हमारा धनाढ्य और महत्त्वप्राप्त देश उन लोगों की रक्षा करेगा, जिनका भार हम पर मौजूद है।"

यह लेख २५ मार्च सन् १९१२ को लिखा गया। इसके अनन्तर तीनों वीर मृत्यु को प्राप्त हुए। जब इँगलैंड में यह दुःखद समाचार पहुँचा, तो देश भर में शोक छा गया। बादशाह से लेकर साधारण मनुष्यों ने भी इन वीरों के स्मारक में और इनके कुटुम्ब के पोषणार्थ थोड़ा बहुत धन दिया। धन्य है वह देश

जहाँ ज्ञान-वृद्धि के लिए अपना शरीर बलिदान करने-वाले ऐसे वीरवर उत्पन्न होते हैं।

—रामनारायण मिश्र

प्रश्न

१—दक्षिणी ध्रुव कहाँ है? उसका संक्षेप में वर्णन करो।

२—इँगलैंड के वीर दक्षिणी ध्रुव की खोज में क्यों गए थे?

३—अपने को इन पाँचों वीरों का साथी समझकर दक्षिणी ध्रुव की यात्रा का संक्षेप में वर्णन करो।

४—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के क्या अर्थ हैं? उनमें से रेखांकित शब्दों का वाक्यों में प्रयोग करो—

स्वाभाविक, मनुष्यमात्र, प्राकृतिक शोभा, प्राकृतिक नियम नेता, साहस, आह करना, सिर झुकाना, हृदय हिला देना और स्मारक।

५—नकशे या ग्लोब मे नीचे की तरफ़ देखो, दक्षिणी ध्रुव है। यहाँ हमेशा जाड़ा ही रहता है।

उपर्युक्त वाक्य मे 'यहाँ' किस प्रकार का सर्वनाम है?

६—निम्न-लिखित वाक्य मे जो-जो सर्वनाम आए हैं, उनके प्रकार बताओ—

जो परिश्रम करेगा, सो सफल होगा।

२५—सुसङ्ग और कुसङ्ग

(सुसङ्ग)

सत्सङ्गति उन्नति का कारण
है, कवियों ने ठीक कहा है।
पद्म-पत्र के ऊपर जल-कण
मोती की छवि छीन रहा है॥
अच्छे के सँग में पड़ने से
बुरे लोग भी भले कहाते।
जैसे हरि-कर में रहने से
कम्बुक को हम शीश झुकाते॥
केवल साधु-सङ्ग के बल से
नीच नीचता को खोता है।
ज्यों हिल-मिलकर मलयाचल से
निम्ब वृक्ष चन्दन होता है॥
तुच्छ कीट भी ज्यों पङ्कज में
रहकर हर-शिर पर चढ़ता है।
त्यों करके सतसङ्ग, समाज में,
नर निज उन्नति को करता है॥
पामर भी सुसङ्ग में पड़कर
शीघ्र साधु सा हो जाता है।

जैसे मानस मुख से सुनकर
तोता हरि-यश को गाता है॥

(कुसङ्ग)

क्षुद्र सङ्ग से गुरुजन-महिमा
घट जाती है पल ही भर में।
काप के छूने से गिरि-गरिमा
घटी तैरते थे सागर में॥
अति खल की सङ्गति करने से
जग में मान नहीं रहता है।
लोहे के सँग में पड़ने से;
घन की मार अनल सहता है॥
सबसे नीति-शास्त्र कहता है
दुष्ट सङ्ग दुख का दाता है।
जिस पय में पानी रहता है
वही खूब औटा जाता है॥
उनके प्राण नहीं बचते हैं;
जिनको दुर्जन अपनाते हैं।
जो गेहूँ के सँग रहते हैं
वे ही घुन पीसे जाते हैं॥
जहाँ एक भी दुष्ट रहेगा
वह समाज क्यों चल पावेगा।

जहाँ तनिक भी तिक्त पड़ेगा
मनों दूध हो फट जावेगा ॥

—रामचरित उपाध्याय

प्रश्न

१—सुसङ्ग के लाभ और कुसङ्ग की हानि बताओ।
२—"कपि के छूने से गिरि-गरिमा घटी तैरते थे सागर में" इसकी कथा बताओ।
३—हर और हरि शब्दों का क्या अर्थ है ?
४—"गेहूँ के सङ्ग घुन पिस जाता है" इस कहावत का एक वाक्य में प्रयोग करो।
५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ—
छवि छीनना, शीश झुकाना, हिल-मिलकर और अपनाना।
६—उपर्युक्त पाठ में जो-जो सर्वनाम आए हैं, उनके प्रकार बताओ।

२६—ध्यान

एक दिन द्रोणाचार्य ने अपने शिष्यों की परीक्षा लेने का विचार किया। उन्होंने नीले रंग की एक बनावटी चिड़िया सामने पेड़ की एक ऊँची डाल पर रख दी। अनन्तर सब राजकुमारों को बुलाकर वह चिड़िया उन्होंने दिखाई। दिखाकर आपने कहा—

तुम सब लोग इस निशाने पर बाण चलाने के लिए—इस चिड़िया को बाण से छेदने के लिए—तैयार हो जाओ। हम एक-एक को निशाना लगाने की आज्ञा देंगे। बाण छोड़ने की आज्ञा पाते ही तुम लोग इस चिड़िया के सिर को बाण से छेद देना।

यह कहकर द्रोण ने पहले युधिष्ठिर को बुलाया और निशाने के सामने खड़ा करके उनसे कहा—

हे वीर! पहले हमारे प्रश्न का उत्तर दो। फिर हमारी आज्ञा पाते ही बाण छोड़ना, पहले नहीं।

युधिष्ठिर ने धनुष उठाया और उस पर बाण रख निशाने को ताककर खड़े हुए। तब द्रोण ने पूछा—

हे धर्मपुत्र! तुम इस चिड़िया को देखते हो?

युधिष्ठिर ने कहा—हाँ, देखता हूँ।

फिर द्रोण ने पूछा—

क्या तुम इस पेड़ को, हमको और जितने राजकुमार यहाँ खड़े हैं, उन सबको भी देखते हो?

युधिष्ठिर ने उत्तर दिया—

भगवन्! मैं इस पेड़ को, आपको और खड़े हुए राजकुमारों को भी देख रहा हूँ।

यह बात द्रोण के असन्तोष का कारण हुई।

उन्होंने अप्रसन्न होकर कहा—तुम इस निशाने को न छेद सकोगे। यह कहकर युधिष्ठिर को वहाँ से हटा दिया।

इसके अनन्तर एक-एक करके दुर्योधन आदि को भी आचार्य ने निशाने के सामने बाण चढ़ाकर खड़ा किया और सबसे वही प्रश्न पूछे। उत्तर भी सबने वही दिए जो युधिष्ठिर ने दिए थे। उनके उत्तरों को सुनकर द्रोणाचार्य को बड़ा खेद हुआ। उन्होंने सबका तिरस्कार करके निशाने के सामने से हट जाने को कहा। किसी को बाण छोड़ने की आज्ञा उन्होंने नहीं दी।

अन्त में द्रोण ने मुसकराकर अपने प्यारे शिष्य अर्जुन को बुलाया और उन्हें यथास्थान खड़ा करके आप बोले—

पुत्र! इस बार तुमको यह निशाना मारना होगा। धनुष पर प्रत्यञ्चा चढ़ाओ और निशाने की तरफ बाण तानकर कुछ देर ठहरो। फिर हमारे प्रश्नों का उत्तर देकर आज्ञा पाते ही निशाने पर तीर मारना।

गुरु की आज्ञा से धनुष पर बाण रखकर अर्जुन एकटक निशाने की तरफ देखने लगे। तब द्रोण पहले की तरह अर्जुन से पूछने लगे—

वत्स ! पेड़, पेड़ पर रक्खी हुई चिड़िया, हम और भाई सब तुम्हें देख पड़ते हैं न ?

अर्जुन ने कहा—मुझे सिर्फ निशाना देख पड़ता है। न पेड़ देख पड़ता है, न आप देख पड़ते हैं, न और कोई देख पड़ता है।

तब प्रसन्न होकर द्रोण ने फिर पूछा—

क्या तुम्हें पूरी चिड़िया देख पड़ रही है ?

अर्जुन बोले—मुझे चिड़िया का सिर देख पड़ता है, उसका और कोई अङ्ग नहीं देख पड़ता।

यह सुनकर द्रोण बहुत ही प्रसन्न हुए और बोले—अच्छा, तो निशाने पर बाण छूटने दो।

आज्ञा पाते ही अर्जुन ने बाण छोड़ा और सिर कटी हुई चिड़िया पृथ्वी पर आ गिरी। द्रोण ने अर्जुन को बड़े प्रेम से गले से लगा लिया।

—महावीरप्रसाद द्विवेदी

प्रश्न

१—इस पाठ से तुमको क्या शिक्षा मिलती है ?

२—अपने को अर्जुन मानकर संक्षेप से इस कथा का वर्णन करो।

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बतलाओ और उनको वाक्यों में प्रयोग करो—

बनावटी, अनन्तर, ताकना, भगवन्, असन्तोष, कारण होना, खेद होना, तिरस्कार करना, एकटक, वत्स और गले लगाना।

४—निम्न-लिखित शब्दों के लिङ्ग बताओ—

बाण, सिर, धनुष, पेड़, अर्जुन और पृथ्वी।

५—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पैरा में जो-जो संज्ञाएँ आई हैं, उनके लिङ्ग बताओ।

२७—प्रणवीर अर्जुन

(१)

"रहते हुए तुमसा सहायक प्रण हुआ पूरा नहीं।
इससे मुझे है जान पड़ता भाग्य-बल ही सब कहीं॥
जलकर अनल में दूसरा प्रण पालता हूँ मैं अभी।
अच्युत! युधिष्ठिर आदि का अब भार है तुम पर सभी॥

(२)

सन्देश कह दीजो यही सबसे विशेष विनयभरा।
खुद ही तुम्हारा जन धनञ्जय धर्म के हित है मरा॥
तुम भी कभी निज प्राण रहते धर्म को मत छोड़ियो।
वैरी न जब तक नष्ट हों मत युद्ध से मुँह मोड़ियो॥

(३)

थे पाण्डु के सुत चार ही यह सोच धीरज धारियो।
हों जो तुम्हारे प्रण-नियम उनको कभी न बिसारियो॥

है इष्ट मुझको भी यही यदि पुण्य मैंने हों किए।
तो जन्म पाऊँ दूसरा मैं वैरशोधन के लिए॥

(४)

कुछ कामना मुझको नहीं है इस दशा में स्वर्ग की।
इच्छा नहीं रखता अभी मैं अल्प भी अपवर्ग की॥
हा! हा! कहाँ पूरी हुई मेरी अभी आराधना ?
अभिमन्यु विषयक वैर का है शेष अब भी साधना॥

(५)

जैसे बने समझा-बुझाकर धैर्य सबको दीजियो।
कह दीजियो, मेरे लिए मत शोक कोई कीजियो॥
अपराध जो मुझसे हुए हों वे क्षमा करके सभी।
कृपया मुझे तुम याद करियो स्वजन जान कभी-कभी॥

(६)

जैसा किया होगा प्रथम वैसा हुआ परिणाम है।
माधव! विदा दो बस मुझे अब बार-बार प्रणाम है॥
इस भाँति मरने के लिए यद्यपि नहीं तय्यार हूँ।
पर धर्म-बन्धन-बद्ध हूँ मैं क्या करूँ लाचार हूँ" ॥

(७)

यह देख लो निज धर्म का सन्मान ऐसा चाहिए।
सोचो हृदय में सत्यता का ध्यान जैसा चाहिए॥

है धन्य अर्जुन के चरित को, धन्य उनका धर्म है।
क्या और हो सकता अहो! इससे अधिक सत्कर्म है?

—मैथिलीशरण गुप्त

प्रश्न

१—अर्जुन के चरित्र से तुमको क्या शिक्षा मिलती है?

२—अपने सन्देशे में अर्जुन ने अपने भाइयों को क्या कर्तव्य बतलाया है?

३—निम्न-लिखित वाक्यों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

भाग्यबल, भार, मुँह मोड़ना, बिसारना, वैरशोधन, अपवर्ग, आराधना, साधना और धर्म-बन्धन-बद्ध।

४—निम्न-लिखित सर्वनामों के प्रकार मय कारकों के बतलाओ—

इससे, मैं, तुम पर, सबसे, तुम्हारे, उनको, मेरी, सबको और वे।

२८—आजकल का स्थल-युद्ध

अब वह समय गया, जब सिपाही खुले मैदान में खड़े होकर लड़ते थे। अब तो बन्दूकों से दो-दो मील तक का निशाना मारा जाता है। एक मील तक का निशाना तो इतना विकट होता है कि उसके लगने में यदि मनुष्य मरता नहीं, तो घायल तो अवश्य ही हो जाता है। तोपों की मार तो आठ से बारह मील

तक की होती है। व्योमयान आकाश में उड़ते है और आसपास घूमकर तोपखाने को यह खबर देते रहते हैं कि शत्रु कहाँ पर है; वे किस तरफ जा रहे हैं; उनकी गोली-बारूद किस स्थान पर है। इन कारणों से कोई भी विचारवान् अफसर अपने सिपाहियों को खुले मैदान में जाने की आज्ञा नहीं देता, न उन्हें वहाँ रहने देता है। सिपाहियों के पास कुदाली, फावड़े आदि रहते हैं। जिस जगह उन्हें ठहरने की आवश्यकता पड़ती है, वहीं वे पाँच-छः फीट गहरा गढा खोद लेते है और उसकी आड़ में छिपे रहते है। विना आड़ के खड़ा होना मानों यमराज को उसी समय निमन्त्रण देना है।

आवश्यकता पड़ने पर यदि फौज को खुले मैदान में आना पड़ता है, तो सिपाही लोग सर्प के समान धरती पर रेंग कर जाते है। क्योंकि पड़े आदमी पर निशाना सुगमता से नहीं लगता और खड़े हुए आदमी पर निशाना तुरन्त लग जाता है। फिर घास, झाड़ी, पेड़, नाली, मेंड़, खँडहर आदि जो कुछ मिले, उसी के सहारे सिपाही आगे बढ़ते हैं। घास यदि ऊँची हुई, अथवा धरती पर झाड़ी हुई, तो सिपाही लोग बकरों के समान हाथ-पैर के बल चलते हैं, और पत्तों में सिर

छिपाए हुए आगे बढ़ते हैं, जिससे दुश्मन के सिपाही
यह न जान सकें कि वे लोग कहाँ हैं और ऊपर उड़ते
हुए व्योमयानों पर बैठे हुए भेदिए भी उन्हें न पहचान सकें।

यदि बीच में कुछ जगह खुली हुई मिली, तो सिपाही
लोग एक आड़ से दूसरी आड़ तक लपककर बिजली
के समान निकल जाने की चेष्टा करते हैं। पर्दानशीन
औरत, दूसरों की निगाह बचाने के लिए, अपना हाथ-
मुँह, शरीर ढाँककर खुली जगह से जिस तेज़ी के
साथ निकल जाती है, उससे लाख दरजे बढ़कर तेज़ी
से सिपाहियों को ऐसे स्थान से निकालना पड़ता है।
आड़ में पहुँचकर जिस प्रकार वह स्त्री अपने को
छिपाकर लुप्त-सी हो जाती है, उसी प्रकार वीर से वीर
सिपाही भी युद्ध-क्षेत्र में पर्दानशीन हो जाते हैं।
ज़रा भी शरीर का कोई भाग आड़ से बाहर हुआ
कि शत्रु की गोली सनसनाती हुई आई और उस
मनुष्य को असावधानी का पुरस्कार मिला। उस दशा
में यदि किसी प्रकार की भी आड़ न मिले और
हज़ार डेढ़ हज़ार गज़ के खुले मैदान को पार करना
हो, और सामने से शत्रु की फ़ौज गोलों और गोलियों
की वर्षा कर रही हो, तो कौन माई का लाल ऐसा
निकलेगा, जो आगे बढ़ने का साहस करे? परन्तु

पिछले योरोपीय समर में सत्तावनवीं हिन्दुस्तानी पल्टन के प्रत्येक सिपाही ने ऐसा ही कर दिखाया था।

अब देखना यह चाहिए कि आजकल के युद्ध में मोर्चे किस प्रकार तैयार किए जाते हैं। मान लिया जाय कि किसी पल्टन को मोर्चा बाँधना है, तो उसका पहला काम होगा कि वह कम से कम पाँच-छः फीट गहरा गढ़ा खोदे और उससे जो मिट्टी निकले उससे शत्रु की ओर एक मेंड़ बना दे। उसमें छोटे-मोटे छेद, सिपाहियों के देखने और बन्दूक चलाने के लिए छोड़ दिए जायँ। प्रत्येक खाई इतनी बड़ी होती है कि उसमें पन्द्रह-बीस अथवा अधिक सिपाही छिप सकते हैं। इसी तरह कुछ थोड़ी-सी जगह छोड़-कर दूसरी खाई तैयार की जाती है। इस प्रकार सात-आठ सौ सिपाहियों की एक पूरी पल्टन के लिए लगातार चालीस-पचास खाइयाँ खुद जाती है।

जब छिपने के लिए खाइयाँ तैयार हो जाती हैं, तब जैसे-जैसे अवकाश मिलता है, उनमें सिपाहियों के लिए और भी सुभीतों का प्रबन्ध किया जाता है। खाइयाँ इतनी गहरी बनाई जाती हैं कि बिना सिर झुकाए सिपाही निधड़क घूम-फिर सकें। उनकी दीवारों में लम्बे-लम्बे आले बनाए जाते हैं, ताकि

उनमें बन्दूकें, कारतूस, बम आदि रक्खे जायँ। भट्टियाँ भी बनाई जाती हैं, ताकि सर्दी विशेष पड़ने पर आग सुलगा दी जाय, सिपाही अपना भोजन तथा चाय-पानी भी तैयार कर लें और गीले कपड़े भी सुखा लें। यदि बर्फ तथा पानी पड़ता हो, तो अगल-बगल बड़े-बड़े ताक बनाए जाते हैं, जिनमें थके-माँदे सिपाही सो सकें। शत्रु के व्योमयान आकर खाइयों पर बम के गोले छोड़ते हैं। अतः उनका मुँह ऊपर से पेड़ों की डालियों आदि से इस प्रकार ढाँक देते हैं, जिससे उड़न-खटोलों पर बैठे हुए शत्रु उनको पहचान न सकें।

प्रत्येक खाई में कम से कम एक "मशीन-गन" नाम की करामाती बन्दूक रहती है। कारतूसों की माला पहनाकर उस यन्त्र को चलाने से उसमें से बड़ी तेज़ी से गोलियों की धारा छूटती है। सिपाहियों की मामूली बन्दूकें एक मिनट में एक बार, बहुत हुआ दो-दो बार, गोली चला सकती हैं; परन्तु इस "मशीन-गन" से एक मिनट में सैकड़ों गोलियाँ चलती हैं। चार-पाँच आदमी तथा कारतूसों की काफी मालाएँ हुईं, तो एक "मशीन-गन" हजार, आठ सौ सैनिकों को सुगमता के साथ रोक सकती है। यदि वे इस

करके आगे बढ़ें भी, तो उनके चिथड़े-चिथड़े उड़ जायँ। इस यन्त्र को महाभारत के समय का आग्नेयास्त्र कहें, तो अनुचित न होगा।

इस प्रकार मोर्चा तैयार करके सिपाही लोग खरगोशों के समान धरती के भीतर रहते हैं ; वहीं खाना, पीना, सोना, उठना, बैठना आदि सब कार्य होते हैं। यदि बाहर निकलना अत्यन्त आवश्यक हुआ तो चमगीदड़ के समान वे लोग रात को निकलते हैं। दिन-रात कुछ आदमी मेंड़ के छिद्रों से शत्रु को ताकते रहते हैं ; कोई-कोई दूरबीन लगाकर भी देखा करते हैं। दुश्मन दिखाई देते ही सन्तरी लोग सिपाहियों को चेतावनी देकर मेंड़ पर बुला लेते हैं। बस, फिर क्या पूछना है। शत्रु पर गोलियों की वर्षा आरम्भ कर दी जाती है। यदि वह पास पहुँच गया, तो उस पर बम के गोले भी फेंके जाते हैं। योरोपीय युद्ध में जर्मन लोग जला देने और आग लगानेवाले तेजाब और प्राणघातक गैस भी छोड़ते थे।

—लज्जाशङ्कर झा

प्रश्न

१—आजकल की लड़ाई में पहले से क्या विशेषता हो गई है ?

२—वर्तमान काल की लड़ाई का ढंग संक्षेप में कहो।
३—खाइयों में जीवन कैसे व्यतीत होता है, वर्णन करो।
४—मशीन-गन और साधारण बन्दूक मे क्या अन्तर है?
५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उनमें से रेखाङ्कितों को वाक्यों में प्रयोग करोः—

निशाना मारना, विकट, लपकना, लोप हो जाना, पर्दानशीन, पुरस्कार, माई का लाल, टुकड़ी, सुभीता, थके-माँदे, अगल-बगल, करामात, हेकड़ी, चिथड़े उड़ना और प्राणघातक।

६—निम्न-लिखित मिश्रित शब्दों में विशेषण बतलाओ—

ऊँची घास, छोटे-मोटे छेद, गहरा गढ़ा और समान घर।

२६—सदुपदेश

उत्तम जन सों मिलत ही, अवगुण हू गुण होय।
घन सँग खारो उदधि मिलि, बरसै मीठो तोय॥ १॥
रहे समीप बड़न के, होत बड़ो हित मेल।
सबही जानत बढ़त है, वृक्ष बराबर बेल॥ २॥
नीच बड़न के संग में, पदवी लहत अतोल।
परे सीप में जलद जल, मुक्ता होत अमोल॥ ३॥
दुर्जन के संसर्ग तें, सज्जन लहत कलेश।
ज्यों दशमुख अपराध तें, बन्धन लगो जलेश॥ ४॥
दुष्ट निकट बसिए नहीं, बसि न कीजिए बात।

कदली बेर-प्रसंग तें, छिदे कण्टकन पात ॥ ५ ॥
कछु कहि नीच न छेड़िए, भलो न वाको संग ।
पाहन डारे कीच में, उछरि बिगारै अंग ॥ ६ ॥
संगति कीजै साधु की, हरै और की व्याधि ।
ओछी संगति नीच की, आठौ पहर उपाधि ॥ ७ ॥
नीच संग बुधि नीच है, सम सो रहे समान ।
बड़े साथ दिन दिन बढ़ै, पंडित कहत प्रमान ॥ ८ ॥
बुद्धिमान गंभीर को, संगति लागत नाहिं ।
ज्यों चन्दन ढिग अहि रहत, विष न होत तिहिमाहिं ॥ ९ ॥
सुख सज्जन के मिलन को, दुर्जन मिले जनाय ।
जाने ऊख मिठास को, जो मुख नीम चबाय ॥ १० ॥
जाहि मिले सुख होत है, तेहि बिछुरे दुख होय ।
सूर उदय बिकसै कमल, ता बिनु सकुचै सोय ॥ ११ ॥
उत्तम थल सेवें सुजन, नीच नीच के वंस ।
सेवत गीध मसान को, मानसरोवर हंस ॥ १२ ॥
समय परे ही जानिए, जो नर जैसो होय ।
बिन ताए खोटो खरो, गहनो लखै न कोय ॥ १३ ॥

—वृन्द कवि

प्रश्न

१—सत्संगति से क्या-क्या लाभ हो सकते हैं ? उदाहरण देकर समझाओ ।

२—उदाहरण देकर समझाओ, दुष्ट की संगति से क्या-क्या हानियाँ होती हैं ?

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उन्हें वाक्यों में प्रयोग करो—

जलद, संसर्ग, जलेश, प्रसंग, उपाधि और विकसना।

४—उपर्युक्त पाठ के प्रथम दोहे में जो गुण-बोधक विशेषण आए हैं, उनके नाम बतलाओ।

३०—समुद्र-यात्रा

समुद्र-यात्रा का आनन्द वर्षा-ऋतु में अरब-सागर पार करते समय बम्बई और अदन के बीच मिलता है। उस समय की बात याद आते ही इस समय भी रोमाञ्च हो जाता है और साथ ही हँसी भी आती है। एक ओर भारत छोड़ने का खेद और दूसरी ओर समुद्र की बीमारी।

बम्बई में अगस्त में वर्षा का पूर्णरूप दिखाई पड़ता है। रात-दिन की वर्षा से चित्त व्याकुल हो जाता है। ऐसे समय समुद्र के किनारे चौपाटी पर जाकर समुद्र के दर्शन करने और उसके भयंकर रूप को देखने से हृदय में डर पैदा होता है। हृदय की ऐसी अवस्था में जहाज़ पर आना ही एक बुराई है। उस पर किनारा छोड़ने के एक ही घंटे बाद बीच

समुद्र में पहुँच जाने पर चक्कर का आना ऐसा शुरू होता है कि मनुष्य के होश गुम हो जाते हैं। भयंकर लहरों के साथ जहाज के ऊपर-नीचे होने के कारण तबीअत मचलाने लगती है और उल्टी का सिलसिला जारी हो जाता है।

जहाज की छत पर समुद्र का पानी बड़े वेग से टकराने लगता है और प्रतीत होता है कि जहाज़ टुकड़े-टुकड़े होकर शीघ्र ही रसातल को पहुँचना चाहता है। ऐसी दशा में सब यात्री छत से नीचे उतार दिए जाते हैं और अपनी-अपनी बन्द कोठरियों में जाकर लेट जाते हैं। परन्तु आराम कहाँ! तबीअत मचलाती है, उल्टियाँ जारी ही रहती है और मन इतना मलिन और व्याकुल रहता है, जितना शायद और किसी भी बीमारी में नहीं रहता। ऐसी अवस्था को सी-सिकनेस (समुद्र की बीमारी) कहते है। यह एक विचित्र बीमारी है। जहाज के ऊपर नीचे होने के कारण यात्री के पेट में इतनी खलबली मच जाती है कि उसके भीतर कोई चीज नहीं रह सकती।

परन्तु देखने में आया है कि यह समुद्र की बीमारी किसी को अधिक और किसी को कम होती है। जहाज के मल्लाहों को जहाज़ पर सब तरह की अवस्थाओं

में रहने का इतना अभ्यास हो जाता है कि उन्हें भयङ्कर से भयङ्कर तूफान में भी कुछ पता नहीं लगता। क्रोध तो उस समय आता है, जब हम तो बीमार पड़े हुए व्याकुलता से घबरा रहे हों और एक मल्लाह आनन्द से विचरता और हमारी अवस्था को देखकर हँसता है। अधिक व्याकुल होकर जब कोई बीमार यात्री जहाज के डाक्टर को बुलाता है, तब डाक्टर भी हँसकर कह देता है कि कुछ चिन्ता की बात नहीं; शीघ्र अच्छा हो जायगा। उस समय ऐसा मालूम होता है, मानो सारे संसार ने हमारे विरुद्ध जाल-सा रच रक्खा है।

इँगलैंएड से जहाज पर सवार होकर मार्सेल आने में बीच में पुर्तगाल देश के पश्चिमी तट पर बिसके की खाड़ी बड़ी भयानक और विकट मिलती है। कोई भी मौसम क्यों न हो इस भयानक खाड़ी को पार करने में प्रायः बड़ा कष्ट होता है। खासकर जाड़े की ऋतु में तो जरूर ही तूफान का सामना करना पड़ता है। वे लोग बड़े भाग्यशाली समझे जाते हैं, जो शान्तिपूर्वक इस खाड़ी को तय कर लेते हैं।

जाड़े में इँगलैंएड से अमरीका जाते समय भी बहुधा तूफान का सामना करना पड़ता है। इस यात्रा में सन्तोष की बात यह है कि जहाज बड़े-बड़े होते

हैं। उनका वजन इतना अधिक होता है कि समुद्र की तेज और शक्तिशाली लहरों की टक्करों की मार खाकर भी वे अधिक नहीं हिलते। इधर भारत को आनेवाले जहाज का वजन अधिक से अधिक बारह हजार टन का होता है। इसका कारण यह है कि इन्हें स्वेज़ की तंग नहर पार करनी पड़ती है। पर अटलाण्टिक महासागर पर चलनेवाले जहाज़ों का वज़न साठ हजार टन तक होता है।

वे जहाज खासे महल से होते हैं। उनमें आनन्द की सब सामग्रियाँ और सारे सामान प्रस्तुत रहते हैं। स्नान करने के लिए सुन्दर कुण्ड और सब लोगों को एक साथ मिलकर खाने के लिए सुहावना बड़ा कमरा होता है। सभा, संगीत तथा नाटक इत्यादि के लिए अलग-अलग कमरे होते हैं। इसके सिवाय दिल बहलाने के लिए तरह-तरह के खेलों की और-और सामग्रियाँ भी उपस्थित रहती है। परन्तु तूफान के समय ये आनन्द की सब चीजें व्यर्थ हो जाती हैं। पलँग पर लेटे रहने के अतिरिक्त किसी भी बात की सुध नहीं रहती। खाने की अच्छी से अच्छी चीजें एक ओर और खेलने की चीजें दूसरी ओर पड़ी रहती है, इन्हें कोई नहीं पूछता।

जाड़े के बाद वसन्त-ऋतु में इँगलैण्ड अमरीका के

बीच अटलाण्टिक महासागर की यात्रा बड़ी जोखिम की रहती है। जाड़े के दिनों में इस महासागर का भाग जमकर बर्फ का पहाड़-सा बन जाता है। बसन्त आने पर वही पहाड़ टूटकर कई भागों में बँट जाता है। फिर वे छोटे बर्फ के पहाड़ समुद्र पर तैरते हुए दक्षिण की ओर समु की लहरों के साथ बह आते हैं।

इनका अधिक भाग जल के भीतर छिपा रहता है, जो छोटा अंश दिखाई देता है, वह दूर से धुआँ-सा दृष्टिगोचर होता है जिससे आने-जानेवाले जहाज़ों को कुहरे का भ्रम हो जाता है और अपनी तेज चाल के कारण जहाजों का इस बर्फ के पहाड़ से टक्कर हो जाती है, जिससे वे टुकड़े-टुकड़े होकर डूब जाते हैं। टाइटानिक नामक साठ हज़ार टन वजन का एक बड़ा भारी और नया जहाज इसी प्रकार अपनी यात्रा ही में इस बर्फ के पहाड़ से टकराकर चूर हो गया था और अपने सारे कीमती माल और यात्रियों सहित रसातल को पहुँच गया था।

योरोपीय महायुद्ध के समय व्यापक समुद्र की यात्रा बड़ा भयंकर बन गई थी। जर्मनी के पनडुब्बी जहाज़ों ने (सबमेरीन) जहाजों यात्रियों का नाश में नष्ट कर दिया था। वे बिना किसी सोच-विचार के तो जहाज

मिलता, उसी को डुबो देते थे। इसका कारण उनका यह सन्देह था कि यात्री जहाज़ों के द्वारा बारूद तथा सिपाही छिपाकर भेजे जाते हैं। अतएव जर्मन लोग इनके साथ निर्दोष यात्रियों का भी समुद्र के नीचे पहुँचाकर उन्हें रसातल का मज़ा चखा देते थे।

ये सब विपत्तियाँ होते हुए भी समुद्र की यात्रा बड़ी रमणीय और स्वास्थ्यदायक होती है। समुद्र से निकलने-वाली ओज़ीन वायु अनेक रोगों को दूर करती है। समुद्र-यात्रा भिन्न-भिन्न देशों की विभिन्न जातियों और वस्तुओं का परिचय कराती और ज्ञान की वृद्धि करती है। इसलिए यदि अवसर मिले, तो इन तमाम आप-त्तियों के होते हुए भी भारत के नवयुवकों को समुद्र-यात्रा अवश्य करनी चाहिए।

—जगन्नाथ खन्ना

प्रश्न

१—समुद्र-यात्रा के लाभ संक्षेप में लिखो।

२—समुद्र-यात्री को किन किन आपदाओं का सामना करना पड़ता है?

३—योरोपीय युद्ध में समुद्र-यात्रा क्यों अधिक भयंकर हो गई थी?

४—सी-सिकनेस किस रोग को कहते हैं?

५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

रोमाञ्च, होश गुम होना, रसातल, व्याकुल, जाल रचना, प्रस्तुत, चूर होना, रमणीय और परिचय।

६—निम्न-लिखित वाक्यों में संख्याबोधक विशेषण बताओ—

(१) ऐसी दशा में सब यात्री छत से नीचे उतार दिए जाते हैं।

(२) इधर भारत को आनेवाले जहाज़ का वज़न अधिक से अधिक बारह हज़ार टन होता है।

२१—ग्राम-गुण-गान

आहा! कैसा सुखद ग्राम है सबका मन हरनेवाला।
प्रकृति देवि की बनी हुई है मानो यहाँ शोभा-शाला॥
सुहृद नागरिक देख यहाँ का दृश्य अधिक सुख पाते हैं।
सुखद दृश्य अवलोकन के हित कभी-कभी वे आते हैं॥
छोटे-छोटे गेह बने हैं शुभ्र मनोहर सुखदाई।
कही न जाती मुझसे प्यारे! उनकी उत्तम सुघराई।
तुरई, कुम्हड़े, ककड़ी इनकी लता मनोहर भाती हैं
हरित दृश्य सुन्दर दिखलाकर मन में मुद उपजाती हैं।
एक ओर बड़हल, केले के वृक्ष अपार लगाते हैं
जहाँ बैठ गौरैया, मैना, पक्षी सुख से गाते हैं।

दौड़-दौड़कर खेल रहे हैं कृषकों के बच्चे प्यारे।
करती उनकी माता सुख से घर के काम-काज सारे॥
एक ओर निकटस्थ अधिक है स्वच्छनीरयुत सुन्दर ताल।
जहाँ छाँह हित सघन लगे हैं पीपल, किंसुक और रसाल॥
कमल तथा वर कुमुद जहाँ पर विकसित रहते हैं दिनरात।
भ्रमर-पुंज मकरंद पान करते "गुनगुन" गुंजनसह भ्रात॥
पनिहारिन पानी लेने को पंक्ति बाँधकर जाती हैं।
सिर पर नीर-पूर्ण मिट्टी के कलसे ले-ले आती हैं॥
गाय-बैल ले ग्राम बनों में बंशी ग्वाल बजाता है।
आहा! कैसा कर्ण-प्रिय है सुनकर मन हुलसाता है॥
एक ओर पल्लवित वृक्ष से सज्जित पर्वत हैं भारी।
एक ओर झरना झरता है "झरझर" शब्द मनोहारी॥
एक ओर निज खेत जोतता बड़े प्रेम से बोता धान।
एक ओर गन्ने में पानी देता कोई श्रमी किसान॥
ग्रामाधिप का भवन बना है सुन्दर सुथरा और पवित्र।
बैठ जहाँ नित ग्राम्य पंचगण करते है नवन्याय विचित्र॥
यहाँ घूस का काम नहीं है नहीं कपट-पूरित व्यवहार।
ईश्वर की साक्षी दे करते जीत-हार सब विधि-अनुसार॥
बना हुआ है सात्त्विक छोटा जगन्नाथ का मन्दिर एक।
पाते हैं विश्राम जहाँ पर आकर साधू नित्य अनेक॥
यहाँ न उड़ती बुरी मोरियों से दुर्गन्ध शहर की भाँति।

और न पैदा होती प्यारे ! भाँति-भाँति रोगों की पाँति ॥
नगरों में रहता था मैं जब मुझको ग्राम न भाता था ।
ग्रामीणों को अपढ़ जानकर पास न उनके जाता था ॥
किन्तु यहाँ तो उत्तम कवि हैं शिक्षित जन भी हैं दो-चार ।
बना हुआ है एक मदरसा करने को शिक्षा-विस्तार ॥
इस प्रकार से सभी सुखों का साज मुझे ललचाता है ।
छोड़ ग्राम नगरों में रहना मुझे नहीं अब भाता है ॥
वर्णन करूँ कहाँ तक प्यारे ! ग्राम-दृश्य है अपरंपार ।
उचित जान मैंने दर्शाए यहाँ ग्राम-गुण हैं दो चार ॥

—मुरलीधर पाण्डेय

प्रश्न

१—भारतवर्ष के ग्रामों की प्राकृतिक दशा साधारणतः किस प्रकार की होती है ?

२—ग्रामीण मनुष्यों का जीवन कैसा होता है ? शहर के मनुष्य-जीवन से उसकी तुलना करो ।

३—ग्रामों और नगरों के जल-वायु और लोगों के रहन-सहन में क्या भेद है ?

४—नागरिक, किंशुक, रसाल, मकरन्द, ग्रामाधिप, सात्त्विक शब्दों के अर्थ बतलाओ ।

५—'वह' और 'ऐसा' सर्वनाम भी हैं और विशेषण भी । इनकी पहचान कैसे होती है ? उदाहरण देकर समझाओ ।

३२—हैज़ा (विशूचिका)

हैज़ा भी एक प्रकार का संक्रामक रोग है। इसके कीड़े इतने सूक्ष्म होते हैं कि वे आँखों से नहीं दिखाई देते। इनके देखने के लिए एक प्रकार के यन्त्र की आवश्यकता होती है, जिसे सूक्ष्मदर्शक यन्त्र (खुर्दबीन) कहते हैं, जिससे इनका सूक्ष्मरूप कई गुना बड़ा दिखलाई देता है। ये कीड़े सड़े, दुर्गन्धयुक्त पदार्थों में पैदा हो जाते हैं, जिनके उपयोग से मनुष्य को यह रोग हो जाता है। ये कीड़े पानी के द्वारा या किसी भोजन के पदार्थ के द्वारा मनुष्य के आँतों में पहुँच जाते हैं और बहुत शीघ्रता से बढ़ना शुरू करते हैं और हैज़ा पैदा करते है। जब किसी को हैजा होता है, तो उसको जल्दी-जल्दी एक विशेष तरह के सफेदी लिये हुए दस्त और खास तरह की कै होना शुरू होती है। पेशाब बन्द हो जाती है, हाथ-पैर ऐंठने लगते हैं और शरीर ठंढा होने लगता है।

कई तरह से हैजे के कीड़े एक मनुष्य से दूसरे के भीतर पहुँच जाते हैं, जिनमें मुख्य ये हैं—

(१) रोगी के दस्त और कै या उसके मल में सने हुए कपड़े यदि खुले स्थान में फेंक दिए जायँ या रख दिए जायँ, तो मक्खियाँ उस पर बैठ जाती

है। मक्खियों के बैठने पर उनके पैरों और परों में दस्त और कै का कुछ-कुछ अंश लिपट जाता है। जब ये मक्खियाँ उड़कर किसी भोजन पर या खाने के फलों या पानी के बर्तन पर बैठती हैं, तब हैजे के इन सूक्ष्म कीड़ों को इन पदार्थों पर लिपटा देती हैं। जो मनुष्य उन पदार्थों को खाते हैं, उनकी आँतों में ये कीड़े पहुँच जाते हैं और उनको भी वही रोग हो जाता है।

(२) रोगी के घर के लोग अक्सर रोगी के कै और मल के कपड़ों को ले जाकर कुओं, तालाबों, नहरों इत्यादि जलाशयों पर साफ करते हैं, जिसके कारण इस रोग का विष उनमें चला जाता है और जिससे रोग बढ़ता है।

(३) कभी-कभी मनुष्य विष के भरे हुए ऐसे जलाशयों के जल में अपने कपड़े या खाने के पदार्थ-फल इत्यादि अज्ञानता से धो लेते हैं। ये धुले हुए कपड़े और पदार्थ घर में आते हैं और उनके संसर्ग में या भोजन के द्वारा इस रोग के कीड़े मनुष्य के भीतर पहुँच जाते हैं और रोग फैलाते हैं।

(४) रोगी के मर जाने के उपरान्त उसके शरीर को बहुत लोग नदी में बहा देते हैं, इससे नदी के जल में यह विष पहुँच जाता है।

साधारण प्रकार से एक सप्ताह तक इस रोग के चिह्न रोगी में रहते हैं। यदि रोगी इस समय को पार कर गया, तो उसके अच्छे होने की आशा हो जाती है।

जिन कारणों से रोग फैलता है, उन्हें न होने देना ही उसे रोकने का उपाय है, याने—

(१) इन दिनों पानी को सदा उबालकर पीना चाहिए और फल इत्यादि को लाल दवा (पोटेसियम-परमेंगनेट) के पानी में कुछ देर तक डुबाकर खाना चाहिए।

(२) रोगी की कै और दस्त को कभी खुले में न छोड़ना चाहिए और न खुले में फेंकना चाहिए, ताकि उस पर मक्खियाँ न बैठें, उसे जला देना चाहिए। जिस जमीन पर ये जलाए जायँ, उसे, यदि कच्ची हो, तो खुरच देनी चाहिए और यदि पक्की हो, तो उस पर पुनः चूने इत्यादि का लेप (पलस्तर) कर देना चाहिए।

(३) प्रत्येक मनुष्य को ऐसे रोगी के कपड़ों को तालाब, कुएँ इत्यादि जलाशयों में धोने से तुरन्त रोकना चाहिए और न उन मनुष्यों को जलाशयों के निकट आने देना चाहिए, जो रोगी की उस समय सेवा कर रहे हों।

का उपयोग न करने देना चाहिए। उसके चारों ओर मिट्टी का तेल डलवा देना चाहिए। हरएक कुएँ में लाल दवा (पोटेसियम परमैंगनेट) डलवा देनी चाहिए, जिससे इस रोग के कीड़े यदि कुएँ में भी पहुँच गए हों, तो इस दवा से मर जायँ। यह भी आवश्यक है कि कुएँ से पानी खींचने के लिए एक या दो मनुष्य खास तौर से नियत कर दिए जायँ और उन्हें नई रस्सियाँ और डोल दी जायँ, ताकि अन्य घड़ों या मैले बर्तनों द्वारा रोग के कीड़े पुनः कुएँ में न पहुँचने पाएँ।

(५) रोगी के अच्छे हो जाने पर, या मर जाने पर उसके कपड़े जहाँ तक हो सके जला देने चाहिए। यदि वे बहुमूल्य हों, तो उन्हें पानी में खूब उबाल ले और फिर कुछ दिन धूप में सुखा ले।

(६) यदि रोगी मर जाय, तो उसका शरीर नदी में कभी न बहाना चाहिए; क्योंकि इससे रोग के कीड़े जल में पहुँचकर औरों में रोग फैलाते हैं। उसके शरीर को या तो जला देना चाहिए या गहरा गड्ढा खोदकर उसमें गाड़ देना चाहिए।

—दयानंद जोशी

प्रश्न

१—संक्रामक रोग किसे कहते हैं ?
२—हैज़ा कैसे उत्पन्न होता है ? उसके क्या चिह्न हैं ?

३—हैज़े के विषय में हमें क्या ख़बरदारी रखनी चाहिए ?

४—'पोटेसियम परमेंगनेट' नामक दवा किस काम आती है ? उसके कुछ प्रयोगों का वर्णन करो।

५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—

संक्रामक, उपयोग, मल, अंश, जलाशय, संसर्ग, चिह्न, बावड़ी और नियत करना।

६—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पैरा के निम्न-लिखित शब्द किस प्रकार के हैं—

संक्रामक, सूक्ष्मदर्शक, दुर्गन्धयुक्त और किसी।

७—निम्न-लिखित वाक्य में जो विशेषण आए हैं, उनके प्रकार बताओ—

जो मनुष्य इन पदार्थों को खाते हैं, उनकी आँतों में ये कीड़े पहुँच जाते हैं और उनको भी वही रोग हो जाता है।

२३—स्वार्थी

स्वार्थी का भी जन्म सफल क्या हो सकता है ?
जग में क्या वह सुयश-बीज भी बो सकता है ?
जीवन में क्या उसे विजय-पद मिल सकता है ?
ऊसर में भी कनक-कमल क्या खिल सकता है ॥ १ ॥
मेल मिलाकर कूट-नीति की बात बनाता।
छिप-छिप करके स्वार्थ-सिद्धि की घात लगाता ॥

प्रबल तर्क की धारा में निशदिन बहता है ।
निर्दय होकर कुटिल काल बनकर रहता है ॥ २ ॥
न्याय-नियम की ओर न उसका मन जाता है ।
करने को उत्पात दनुज-सम बन जाता है ॥
घड़ा पाप का कभी फूट गिर ही जाता है ।
जो जैसा करता निज कृति का फल पाता है ॥ ३ ॥
राजा हो या रंक, भक्त योगी या भोगी ।
हो सकता है कभी नहीं उसका सहयोगी ॥
अगर कदाचित् आज किसी से बन जाता है ।
स्वार्थ-विवश कल शत्रु-भाव से तन जाता है ॥ ४ ॥
स्वार्थी मानव नहीं सहारा कुछ भी पाता ।
विषधर को भी क्या कोई है दूध पिलाता ?
प्रियजन या हों मित्र, शत्रु सब हो जाते हैं ।
मतलब के सब यार सहायक खो जाते हैं ॥ ५ ॥
प्रबल शत्रु है स्वार्थ मनुज को दीन बनाता ।
कौड़ी का कर तीन हीन अति क्षीण बनाता ॥
जो जन इसके विकट फाँस में फँस जाते हैं ।
खो करके सर्वस्व निर्बल हो पछताते हैं ॥ ६ ॥
स्वार्थी का विश्वास नहीं कोई करता है ।
जला दूध का मनुज मठे से भी डरता है ॥
आँखों का बन शूल धूल सम नष्ट रहता है ।

घोर घने अपमान अनेक सदा सहता है ॥ ७ ॥
स्वार्थ-विवश हो कहो, पेट क्या भर सकते हो ?
मोह-सिन्धु है अगम किन्तु क्या तर सकते हो ?
धर्म-कर्म अनुसार न्याय से फल पाओगे।
बोकर वृक्ष बबूल आम क्या उपजाओगे ? ॥ ८ ॥

—ज्योतिप्रसाद मिश्र 'निर्मल'

प्रश्न

१—स्वार्थी मनुष्य अपनी उन्नति नहीं कर सकता। इसके क्या कारण हैं ? क्यों उसका समाज में आदर नहीं होता ?
२—स्वार्थ से कौन-कौन सी हानियों की सम्भावनाएँ हैं ?
३—सच्चे मित्र और कपटी मित्र में क्या भेद है ?
४—मनुष्य का चरित्र कैसा होना चाहिए ?
५—'स्वार्थी' पाठ से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?
६—निम्न-लिखित शब्दों के अर्थ लिखो—

कनक, कूट-नीति, दनुज, सहयोगी, विषधर, उत्पात, मोह।

७—निम्न-लिखित उक्तियों का क्या मतलब है ? इनका प्रयोग अपनी भाषा में करो—

घात लगाना, तर्क की धारा बहाना, पाप का घड़ा फूटना, तीन कौड़ी का होना, दूध का जला छाँछ भी फूँक-फूँककर पीता है।

८—उपर्युक्त पाठ में जो-जो विशेषण आए हैं, उनके प्रकार बताओ।

६—निम्न-लिखित वाक्यों में रिक्त स्थानों में विशेषणों की पूर्ति करो—

१.—मनुष्य का कोई सहारा नहीं करता।

२.—मनुष्य नित्य अपमान सहता है।

३.—जैसा करता है—अपने किए का फल पाता है।

३४—एक जापानी की वीरता

प्रायः तीन बजे रात को आसागिरी नामक एक विनाशक जापानी जहाज़ इधर-उधर टकराता, ठोकरें खाता पोर्ट आर्थर के मुँह तक पहुँच ही तो गया। वीरवर कप्तान इसाकवा इसका अध्यक्ष है। उसका चित्त अब प्रसन्नता और उत्साह से प्रफुल्लित हो जाता है। पर ज्यों ही आसागिरी पोर्ट आर्थर के मुहाने पर पहुँचा कि रूसियों की सर्चलाइट का प्रकाश उस पर पड़ा।

तो भी इसाकवा भयभीत नहीं होता और उसके यह ध्यान ही में नहीं आता कि कहाँ वह और कहाँ जगद्विख्यात पोर्ट आर्थर! जिस पोर्ट आर्थर के दुर्गों से तीन सौ प्रलयकारिणी तोपें अपने भयंकर मुँह बाए समुद्र की ओर घूर रही हैं, उसी पोर्ट आर्थर का सामना एक छोटा-सा विनाशक जहाज करे! आश्चर्य!! महाआश्चर्य !!!

क्या तीन सौ तोपों के एकदम कायर होने से एक भी गोला आसागिरी पर न पड़ेगा ? परन्तु कायरों की भाँति आसागिरी के लोग मरने के पहले ही क्यों मृत्यु के स्वप्न देखने लगते ? और फिर पृथ्वी पर ऐसा कौन कठिन कार्य है, जो हिम्मत से सुगम न हो जाय ? बस, वीर कप्तान ने पूर्ण वेग से आसागिरी को उस दुर्ग की ओर छोड़ ही तो दिया और उधर तीन सौ तोपों से उस पर गोलों की वृष्टि होने लगी। उन तोपों के गोलों ने अपने सम्मुख के सिन्धु को मथ डाला। पर भाग्यवश आसागिरी पर एक भी गोला नहीं पड़ा, नहीं तो उसका कहीं पता तक न लगता।

धनुष से छुटे हुए तीर की तरह शीघ्रता से आसागिरी पोर्ट के भीतर प्रवेश कर गया। अब यहाँ पर तोपों के गोलों की वर्षा उस पर नहीं की जा सकती थी; क्योंकि ऐसा करने से रूसी जलयानों पर (जिनका पूरा बेड़ा बन्दर के भीतर ही खड़ा था) गोले गिरने का खटका था। वहाँ जाकर आसागिरी ने एक बहुत बड़े जंगी जहाज पर एक टारपीडो गोले का प्रयोग किया।

उस समय उसके आनन्द का ठिकाना न रहा कि जब उसने अपने नेत्रों से देख लिया कि वह टारपीडो अपने लक्ष्य पर ठीक जा पड़ा। अब आसागिरी

प्रश्न

१—कप्तान इसाकवा ने क्या वीरता प्रदर्शित की थी? उसका वर्णन करो।

२—निम्न-लिखित पदों और शब्दों के अर्थ बतलाओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

अध्यक्ष, प्रफुल्लित होना, जगद्विख्यात, प्रलयकारिणी, मथना, बेतहाशा, उत्तमोत्तम और प्रत्युत्तर।

३—निम्न-लिखित शब्दों के विशेषण बनाओ—

उत्साह, शीघ्रता, शूरता, वीरता, प्रतिष्ठा, रूस और संसार।

४—निम्न-लिखित विशेषणों की संज्ञाएँ बनाओ—

जापानी, भयङ्कर, साहसी, भाग्यवान् और कायर।

३५—परमेश्वर की लीला

ध्यान लगाकर जो तुम देखो सृष्टी की सुघराई को।
बात-बात में पाओगे उस ईश्वर की चतुराई को॥
ये सब भाँति-भाँति के पक्षी ये सब रंग-रंग के फूल।
ये बन की लहलही लता नव ललित ललित शोभा के मूल॥
ये नदियाँ ये झील सरोवर कमलों पर भौंरों की गुंज।
बड़े सुरीले बोलों से अनमोल बनी वृक्षों की कुंज॥
ये पर्वत की रम्य शिखा औ शोभा सहित चढ़ाव-उतार।
निर्मल जल के सोते-झरने सीमा-रहित महाविस्तार॥

छै प्रकार की ऋतु का होना नित नवीन शोभा के संग।
पाकर काल वनस्पति फलना रूप बदलना रंग-बिरंग ॥
चाँद-सूर्य की शोभा अद्भुत बारी से आना दिन-रात।
त्यों अनन्त तारा-मंडल से सज जाना रजनी का गात ॥
यह समुद्र का पृथ्वीतल पर छाया जो जलमय विस्तार।
उसमें से मेघों के मंडल हों अनन्त उत्पन्न अपार ॥
लरजन-गरजन घनमंडल की बिजली वर्षा का संचार।
जिसमें देखो परमेश्वर की लीला अद्भुत अपरम्पार ॥

—श्रीधर पाठक

प्रश्न

१—परमेश्वर की लीला हमें कैसे मालूम होती है ?
२—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—
सुघराई, नव, ललित, कुंज, जलमय, रजनी, संचार और अपरम्पार।
३—निम्न-लिखित वाक्यों में क्रियाएँ बताओ—
(१) तुम ईश्वर की चतुराई को बात-बात में पाओगे।
(२) परमेश्वर की लीला अपरम्पार है।

३६—स्वामी दयानन्द सरस्वती

आर्यसमाज की नींव डालनेवाले स्वामी दयानन्द सरस्वती संसार के बड़े आदमियों में गिने जाते हैं।

मनुष्यजाति का उपकार करने के लिए उन्होंने बड़ा यत्न किया था। उनका जन्म संवत् १८८१ विक्रमी में काठियावाड़ के मोरवी राज्य में हुआ था। माता-पिता अच्छे धनवान् थे। स्वामीजी के जन्म का नाम "मूलशंकर" था। विद्या पढने तथा संन्यास लेने पर दयानन्द नाम हुआ। दयानन्द बचपन ही से बड़े तीव्रबुद्धि थे। पाँच साल की आयु में उन्होंने कई पुस्तकें पढ डाली थीं।

एक दिन स्वामीजी के चाचा की मृत्यु हो जाने पर कुटुम्बी जन तो रोने लगे, पर स्वामीजी संसार की असारता पर विचार करते रहे। उन्होंने सोचा कि इस जीवन का क्या ठिकाना ? बात की बात में नष्ट हो सकता है। ऐसी दशा में मृत्यु को जीतना चाहिए। मौत को वश में करना यही है कि जिस प्रकार सम्भव हो भलाई की जाय और उसी में सारा जीवन बिताया जाय। यह विचार कर, विना कुछ कहे-सुने, स्वामीजी एक दिन घर से चल दिए। कुटुम्बियों को बड़ा दुःख हुआ, अन्त में स्वामीजी के पिता ने उनका पता लगा लिया और उनको घर लौटा लाए।

अब स्वामीजी को बंधन में बाँधने के विचार से उनके विवाह की तैयारियाँ की जाने लगीं। पर वे
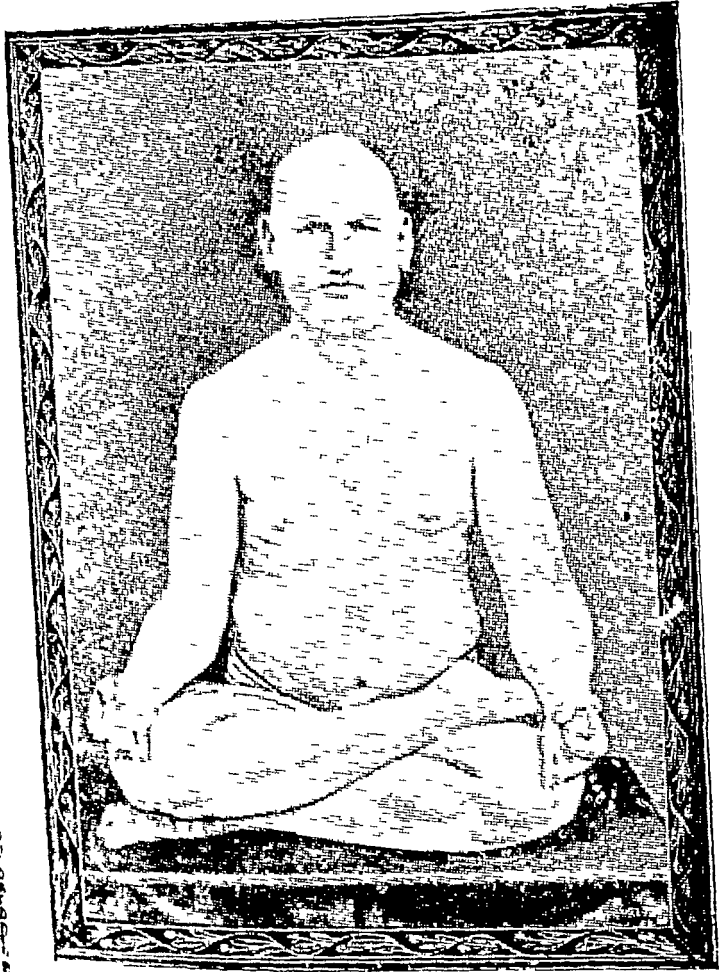
स्वामी दयानंद सरस्वती

आजन्म अविवाहित रहने की प्रतिज्ञा कर चुके थे। अपने को विवाह-जाल में फँसता देखकर स्वामीजी फिर घर से निकल गये और साधु-संन्यासियों का सत्संग करते हुए मथुरा पहुँचे। यहाँ विरजानन्द नामक एक विद्वान् संन्यासी रहते थे। स्वामीजी ने इन्हें ही अपना गुरु बनाया। स्वामी दयानन्द कई साल तक इनके पास विद्या पढ़ते रहे। जब पढ़ाई समाप्त हुई, तो लंगोटबन्द दयानन्द ने "गुरु-दक्षिणा" के रूप में थोड़ी सी लौंगें गुरु की सेवा में भेंट कीं और बिदा चाही। गुरुजी ने लौंगों को बड़े प्रेमपूर्वक स्वीकार करते हुए कहा—"बेटा! जाओ संसार का उद्धार करो, और अज्ञान को दूर भगा दो।"

अपने गुरु से बिदा होकर स्वामीजी लोक-सेवा में लग गये। भारत में यात्रा करते रहे और लोगों को अपने को सुधारने का उपदेश देते रहे। वेदों के उन्होंने ऐसे अपूर्व अर्थ किए कि जिन्हें देखकर विद्वान् लोग दंग रह गये! धार्मिक जगत् में हलचल मच गई!! सब लोग अपने-अपने धर्म-ग्रन्थों को ध्यानपूर्वक पढ़ने लगे। सुधार की कोई ऐसी बात नहीं जिसका स्वामी दयानन्द ने उपदेश न दिया हो। वे अखंड ब्रह्म चारी और निर्भय महात्मा थे। उनके तप का प्रभाव था। आज ऐसा कोई देश नहीं जहाँ गे

स्वामीजी का नाम न जानते हों। लोग स्वामीजी को नवीन भारत का जन्मदाता कहते हैं। उनके द्वारा संस्थापित आर्यसमाज ने बड़ा काम किया है।

स्वामीजी बड़े ही सहनशील थे। प्रचार करते समय उन पर बड़े-बड़े हमले हुए; पर उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक सबको सहन किया। साधारण पुरुष ही नहीं, स्वामीजी के उपदेश का प्रभाव उनके जीवन में ही राजा-महाराजाओं पर तक पड़ा। कई राजे उनके शिष्य बन गये।

एक बार जब स्वामीजी जोधपुर गये, तो वहाँ उन्होंने वेश्याओं का खण्डन किया, जिससे वे चिढ़ गईं और रसोइए से मिलकर उन्होंने स्वामीजी को विष दिलवा दिया। स्वामीजी बालब्रह्मचारी थे, विष के वेग को सह गये। पर उसी समय से उन्हें ऐसा रोग लगा कि मरने के बाद ही उससे छुट्टी मिली। संवत् १९४० विक्रमी की दीपावली को स्वामीजी इस संसार से सदा के लिए विदा हो गये। आपकी मृत्युवार्ता से देश भर में शोक छा गया। कोई भी समझदार आँसू बहाए विना न रहा। मुसलमान, ईसाई और अँगरेजों तक ने दुःख प्रकट किया।

स्वामीजी ने वेदों के भाष्य किए तथा कितनी ही अन्य पुस्तकें लिखीं। उनका रचा "सत्यार्थप्रकाश" प्रसिद्ध ग्रन्थ है। स्वामीजी की मातृभाषा गुजराती थी,

पर उन्होंने अपने सब ग्रन्थ हिन्दी में ही लिखे और हिन्दी जानना सबका कर्तव्य बताया। आपने सबसे पहला आर्यसमाज बम्बई में स्थापित किया था।

स्वामी दयानन्द आदर्श पुरुष थे। उनका जीवन अनुकरणीय है। ब्रह्मचर्य, निर्भयता, स्वदेशभक्ति, धर्मप्रेम, सत्य, तप आदि अनेक बातें हैं, जिनकी शिक्षा नवयुवक विद्यार्थी स्वामीजी के जीवन से ग्रहण कर सकते हैं।

—हरीशंकर शर्मा

प्रश्न

१—स्वामी दयानन्द का जीवनचरित्र संक्षेप में लिखो।
२—स्वामीजी के जीवन से तुम्हें क्या शिक्षा मिलती है ?
३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उनमें से रेखांकित शब्दों का वाक्यों मे प्रयोग करो—
तीव्रबुद्धि, संसार की असारता, "गुरु-दक्षिणा", नवयुवक और मातृभाषा।
४—उपर्युक्त पाठ के प्रथम पैरे मे आए हुए क्रियापदों को बताओ।

३७—प्रकृति

छटा और ही भाँति की देखते हैं।
जहाँ दृष्टि है डालते फेर के मुँह ॥
कहीं छन्द सुनते कहीं रेखते हैं।
कहीं कोकिलों की सुरीली "कुहूकुह" ॥ १ ॥

कहीं व्योम में साँझ की लालिमा है।
कभी स्वच्छ है दृष्टि आकाश आता ॥
कभी रात्रि में मेघ की कालिमा है।
कभी चाँदनी देख जी है लुभाता ॥ २ ॥
कभी इन्द्र का चाप है सप्त रङ्गी।
जहाँ ज्योति के सङ्ग बूँदें घनी हैं ॥
कुसुम्भी, हरा, लाल, नीला, नरङ्गी।
कहीं पीत शोभा कहीं बैंगनी है ॥ ३ ॥
कहीं पेड़ की पत्तियाँ हिल रही हैं।
कहीं भूमि पर घास ही छा रही हैं ॥
सुगन्धैं कहीं वायु में मिल रही हैं।
कहीं सारिका प्रेम से गा रही हैं ॥ ४ ॥
कहीं पर्वतों की छटा है निराली।
जहाँ वृक्ष के वृन्द छाए घने हैं ॥
लगी एक से एक प्रत्येक डाली।
मानो पान्थ के हेतु तम्बू तने हैं ॥ ५ ॥
कहीं दौड़ते झाड़ियों बीच हरने।
लिये मोद से शावकों को भगे हैं ॥
कहीं भूधरों से झरें रम्य झरने।
अहा ! दृश्य कैसे अनूठे लगे हैं ॥ ६ ॥
यथाकाल ही फूल भी फूलते हैं।

फलों से लदे वृक्ष त्यों सोहते हैं ॥
नहीं कौन सौन्दर्य पर भूलते हैं ?
नहीं कौन के चित्त यह मोहते हैं ॥ ७ ॥
अचम्भा सभी वस्तु संसार की है।
वृथा दर्प विज्ञान भी ठानता है ॥
जगन्नाथ ने सृष्टि विस्तार की है।
वही विश्व के मर्म को जानता है ॥ ८ ॥

—वागीश्वर मिश्र

प्रश्न

१—प्रकृति की कुछ सुन्दर वस्तुओं का वर्णन करो।

२—इन पदों का क्या अर्थ है—

"नहीं कौन सौन्दर्य पर भूलते हैं ?" "वही विश्व के मर्म को जानता है।"

३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—

रेखते, लालिमा, कालिमा, चाप, सारिका, शावक, अनूठा, दर्प ठानना और मर्म जानना।

४—निम्न-लिखित क्रियाओं के सामान्य रूप बनाओ—

देखते हैं, लुभाता है, गा रही हैं, भूलते हैं, जानते हैं।

२८—परीक्षा

जब रियासत देवगढ़ के दीवान सरदार सुजानसिंह बूढ़े हुए, तब उन्हें परमात्मा की याद आई। जाकर

महाराज से विनय की कि "दीनबन्धु ! गुलाम ने हुजूर की खिदमत चालीस साल तक की, अब कुछ दिन परमात्मा की सेवा करने की आज्ञा चाहता हूँ। अब मेरी अवस्था भी हीन हुई, राज-काज सँभालने की शक्ति नहीं रही। कहीं भूल-चूक हो जाय, तो बुढ़ापे में दाग़ लगे। सारी जिन्दगी की नेकनामी मिट्टी में मिल जाय।"

राजा साहब अनुभवी, चतुर दीवान का बड़ा आदर करते थे। बहुत समझाया, लेकिन जब दीवान साहब ने न माना तब हारकर उनकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। हाँ, शर्त यह लगा दी कि रियासत के लिए नया दीवान आप ही को चुनना पड़ेगा।

दूसरे दिन देश के नामी-नामी पत्रों में यह विज्ञापन निकला कि देवगढ़ के लिए एक सुयोग्य दीवान की ज़रूरत है। जो सज्जन अपने को इस पद के योग्य समझें, वे वर्तमान दीवान सरदार सुजानसिंह की सेवा में हाज़िर हों। यह ज़रूरी नहीं कि वे ग्रेजुएट हों, मगर हृष्ट-पुष्ट होना आवश्यक है। मन्दाग्नि के मरीजों को यहाँ तक कष्ट उठाने की कोई जरूरत नहीं। एक महीने तक उम्मेदवारों के रहन-सहन, आचार-विचार की देखभाल की जायगी। विद्या का कम, परन्तु

कर्त्तव्य का अधिक विचार किया जायगा। जो महाशय इस परीक्षा में पूरे उतरेंगे, वे इस उच्च पद पर सुशोभित होंगे।

* * * *

इस विज्ञापन ने सारे देश में हलचल मचा दी। ऐसा ऊँचा ओहदा, और किसी प्रकार की सनद की कैद नहीं! केवल नसीब का खेल है। सैकड़ों आदमी अपना-अपना नसीब आज़माने के लिए चल खड़े हुए। देवगढ़ में नए-नए और रङ्ग-बिरङ्ग के मनुष्य दिखाई देने लगे। प्रत्येक रेलगाड़ी से उम्मेदवारों का एक मेला-सा उतरता। कोई पंजाब से चला आता था, कोई मदरास से, कोई नये फैशन का प्रेमी, कोई पुरानी सादगी पर मिटा हुआ। रङ्गीन ऐमामे और चोगे, और नाना प्रकार के अङ्गरखे और कन्टोप देवगढ़ में अपनी सजधज दिखाने लगे।

सरदार सुजानसिंह ने इन महानुभावों के आदर-सत्कार का अच्छा प्रबन्ध कर दिया था। लोग अपने-अपने कमरों में बैठे हुए महीने के दिन गिना करते थे। हरएक मनुष्य अपने जीवन को अपनी बुद्धि के अनुसार अच्छे रूप में दिखाने की कोशिश करता था। मिस्टर "अ" नौ बजे तक सोया करते थे, परन्तु आज-

कल वे बग़ीचे में टहलते हुए उषा का दर्शन करते थे। मिस्टर "ब" को हुक्का पीने की धत् थी, मगर आजकल बहुत रात गए किवाड़ बन्द करके अँधेरे में सिगार पीते थे। महाशय "क" नास्तिक थे। आजकल उनकी धर्मनिष्ठता देखकर मन्दिर के पुजारी को पदच्युत हो जाने की शङ्का लगी रहती थी। मिस्टर "ल" को किताबों से घृणा थी, परन्तु आजकल वे बड़े-बड़े ग्रन्थ खोले पढ़ने में डूबे रहते थे। जिससे बातें कीजिए, वह नम्रता और सदाचार का देवता बन जाता था। लोग समझते थे कि एक महीने का झंझट है, किसी तरह काट लें, कहीं कार्य सिद्ध हो गया, तो कौन पूछता है?

लेकिन मनुष्यों का वह बूढ़ा जौहरी आड़ में बैठा हुआ देख रहा था कि इन बगुलों में हंस कहाँ छिपा हुआ है?

* * * *

एक दिन नए फ़ैशनवालों को सूझी कि आपस में 'हाकी' का खेल हो जाय। यह प्रस्ताव हाकी के मँजे हुए खिलाड़ियों ने पेश किया। यह भी तो आखिर एक विद्या है। इसे क्यों छिपा रक्खें। सम्भव है, कुछ हाथों की सफ़ाई ही काम कर जाय। चलिए, तै हो

गया, कोट बन गए, खेल शुरू हो गया, और गेंद ठोकरें खाने लगी।

रियासत देवगढ़ में यह खेल बिलकुल निराली बात थी। पढ़े-लिखे, भलेमानस लोग शतरञ्ज और ताश जैसे गम्भीर खेल खेलते थे। दौड़-कूद के खेल बच्चों के लिए समझे जाते थे।

खेल उत्साह से जारी था। धावे के लोग जब गेंद को लेकर तेज़ी से बढ़ते, तब ऐसा जान पड़ता था कि कोई लहर बढ़ती चली आती है। लेकिन दूसरी ओर के खिलाड़ी इस बढ़ती हुई लहर को इस तरह रोक लेते थे, मानो लोहे की दीवार हैं।

सन्ध्या तक यही धूम रही। लोग पसीने में तर हो गए। खून की गरमी आँख और चेहरे से झलक रही थी। हाँपते-हाँपते बेदम हो गए, लेकिन हार-जीत का निर्णय न हो सका।

अँधेरा हो गया था। इस मैदान से जरा दूर हट कर एक नाला था। उस पर कोई पुल न था। पथिकों को नाले से होकर आना पड़ता था। खेल अभी बन्द ही हुआ था, और खिलाड़ी लोग बैठे दम ले रहे थे कि एक किसान अनाज से भरी हुई गाड़ी लिये हुए उस नाले में आया। लेकिन कुछ तो नाले में कीचड़

थी, और कुछ उसकी चढाई इतनी तेज़ थी कि गाड़ी ऊपर न चढ़ सकती थी।

वह कभी बैलों को ललकारता, कभी पहियों को हाथों से ढकेलता, लेकिन बोझ अधिक था और बैल कमज़ोर! गाड़ी ऊपर को न चढती और चढती भी तो कुछ दूर चढकर फिर खिसककर नीचे पहुँच जाती। किसान बार-बार ज़ोर लगाता, और बार-बार झुँझलाकर बैलों को मारता, लेकिन गाड़ी उभरने का नाम न लेती। बेचारा इधर-उधर निराश होकर ताकता, मगर कोई सहायक नजर न आता था। गाड़ी को अकेले छोड़कर कहीं जा भी न सकता था। बड़ी आपत्ति में फँसा था।

इसी बीच में खिलाड़ी लोग हाथों में डण्डे लिये झूमते-झामते इधर से निकले। किसान ने उनकी तरफ़ सहमी हुई आँखों से देखा। परन्तु किसी से मदद माँगने का साहस न हुआ। खिलाड़ियों ने भी उसको देखा; मगर बन्द आँखों से, उन आँखों से जिनमें सहानुभूति न थी; उनमें स्वार्थ था, मद था, मगर उदारता या प्रेम का नाम भी न था।

लेकिन उसी समूह में एक ऐसा मनुष्य भी था जिसके हृदय में दया थी, और साहस भी। आज हाकी खेलते हुए उसके पैरों में चोट लग गई थी। व

लँगड़ाता हुआ धीरे-धीरे चला आता था। अकस्मात् उसकी निगाह गाड़ी पर पड़ी। वह ठिठक गया। किसान की सूरत देखते ही सब बात ज्ञात हो गई। डण्डा एक किनारे रख दिया। कोट उतार डाला और किसान के पास जाकर बोला—"मैं तुम्हारी गाड़ी निकाल दूँ?"

किसान ने देखा कि गठे हुए बदन का लम्बा आदमी सामने खड़ा है। डरकर बोला—"हुज़ूर! मैं आपसे कैसे कहूँ?" युवक ने कहा—"मालूम होता है, तुम यहाँ बड़ी देर से फँसे हुए हो। अच्छा तुम गाड़ी पर जाकर बैलों को साधो। मैं पहियों को ढकेलता हूँ। अभी गाड़ी ऊपर जाती है।"

किसान गाड़ी पर जा बैठा। युवक ने पहियों को जोर लगाकर उकसाया। कीचड़ बहुत ज़्यादा थी। वह घुटनों तक जमीन में गड़ गया, लेकिन हिम्मत न हारा। उसने फिर जोर किया, उधर किसान ने बैलों को ललकारा। बैलों को सहारा मिला। हिम्मत बँध गई। उन्होंने कन्धे झुकाकर एक बार जो जोर किया तो गाडी नाले के ऊपर थी। किसान युवक के सामने हाथ जोड़कर खड़ा हो गया और बोला—"महाराज! तुमने मुझे उबार दिया, नहीं तो सारी रात यहीं बैठना पड़ता।"

युवक ने हँसकर कहा—"अब मुझे कुछ इनाम देते हो ?"

किसान ने गम्भीर भाव से कहा—"नारायण चाहेंगे तो दीवानी तुम्हीं को मिलेगी ।"

युवक ने किसान की तरफ गौर से देखा । उसके मन में एक सन्देह हुआ । क्या यही सुजानसिंह तो नहीं हैं ? आवाज़ मिलती है । चेहरा-मोहरा भी वही। किसान ने भी उसकी ओर तीव्र दृष्टि से देखा । शायद उसके दिल के सन्देह को भाँप गया । मुसकराकर बोला—'गहरे पानी पैठने ही से मोती मिलता है ।'

निदान महीना पूरा हुआ । हिसाब का दिन आ पहुँचा । उम्मेद्वार लोग प्रातःकाल ही से अपनी किस-मतों का फैसला सुनने के लिए उत्सुक थे । दिन कटना पहाड़ हो गया । प्रत्येक चेहरे पर आशा और निराशा के रङ्ग आते-जाते थे । नहीं मालूम आज किसके नसीब जागेंगे ? न जाने किस पर लक्ष्मी की कृपादृष्टि होगी ?

शाम के वक़ राजा साहब का दरबार सजाया गया। शहर के रईस और धनाढ्य लोग, राज के कर्मचारी और दरबारी और दीवानी के उम्मेद्वारों का समूह सब रङ्ग-बिरङ्ग की सजधज बनाए दरबार में आ बिराजे। उम्मेद्वारों के कलेजे धड़क रहे थे ।

तब सरदार सुजानसिंह ने खड़े होकर कहा—"ऐ मेरे दीवानी के उम्मेदवार साहबो ! मैंने आप लोगों को जो कुछ तकलीफ दी हो, उसके लिए मुझे क्षमा कीजिए। मुझे इस पद के लिए ऐसे पुरुष की ज़रूरत थी, जिसकी छाती में हृदय हो और चित्त में आत्मबल। हृदय वह, जो उदार हो। आत्मबल वह, जो आपत्ति का वीरता के साथ सामना करे। इस रियासत के सौभाग्य से हमको ऐसा पुरुष मिल गया। ऐसे गुणवाले लोग संसार में कम हैं, और जो हैं, वे कीर्ति और मान के शिखर पर बैठे हुए हैं, जहाँ तक हमारी पहुँच नहीं। मैं रियासत को पंडित जानकीनाथ-सा दीवान पाने पर बधाई देता हूँ।

रियासत के कर्मचारियों और रईसों ने जानकीनाथ की तरफ देखा और उम्मेदवारों के समूह की भी आँखें उधर उठीं, मगर उन आँखों में सत्कार था और इन आँखों में ईर्ष्या।

सरदार साहब ने फिर फ़र्माया—"आप लोगों को यह स्वीकार करने में कोई आपत्ति न होगी कि जो पुरुष खुद ज़ख्मी होने पर भी एक किसान की भरी गाड़ी को दलदल से निकाल कर नाले के ऊपर चढ़ा दे, उसके हृदय में साहस, आत्मबल और उदारता का

सञ्चार है। ऐसा आदमी गरीबों को कभी न सताएगा। उसका संकल्प दृढ़ है, जो उसके चित्त को स्थिर रक्खेगा। वह चाहे धोखा खा जाय, परन्तु दया और धर्म के मार्ग से कभी न हटेगा।

—प्रेमचन्द

प्रश्न

१—इस गल्प से क्या शिक्षा मिलती है?

२—अपने को पंडित जानकीनाथ समझकर इस गल्प को अपने शब्दों में कहो।

३—निम्न-लिखित वाक्यों के ठीक-ठीक आशय बताओ—

(क) गहरे पानी पैठने ही से मोती मिलता है।

(ख) मनुष्यों का वह बूढ़ा जौहरी आड़ में बैठा हुआ देख रहा था कि इन बगुलों में हंस कहाँ छिपा हुआ है।

४—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों मे उनका प्रयोग करो—

नेकनामी, रहन-सहन, आचार-विचार, पूरे उतरना, हलचल मचाना, नसीब, उपा, धत्, नाक में दम, जौहरी, मँजे हुए, हाथों की सफ़ाई, ठकसाना और सङ्कल्प।

५—निम्न-लिखित वाक्यों की क्रियाएं किस प्रकार की हैं—

(क) मिस्टर 'अ' नौ बजे तक सोया करते थे।

(ख) मैं पहियों को ढकेलता हूँ।

(ग) इस रियासत के सौभाग्य से हमको ऐसा पुरुप मिल गया।

३६—भारत-विजय

जग में अब भी गूँज रहे हैं गीत हमारे।
शौर्य वीर्य गुण हुए न अब भी हमसे न्यारे॥
रोम, मिस्र, चीनादि काँपते रहते सारे।
यूनानी तो अभी अभी हैं हमसे हारे॥

सब हमें जानते हैं सदा भारतीय हम हैं अभय।
फिर एक बार हे विश्व! तुम गाओ भारत की विजय॥ १॥

साक्षी है इतिहास हमीं पहले जागे हैं।
जागृति सब हो रहे हमारे ही आगे हैं॥
शत्रु हमारे कहाँ नहीं भय से भागे है?
कायरता से कहाँ प्राण हमने त्यागे हैं?॥

हैं हमीं प्रकम्पित कर चुके सुरपति तक का भी हृदय।
फिर एक बार हे विश्व! तुम गाओ भारत की विजय॥ २॥

कहाँ प्रकाशित नहीं रहा है तेज हमारा?
दलित कर चुके सभी शत्रु हम पैरों द्वारा॥
बतलाओ वह कौन नहीं जो हमसे हारा?
पर शरणागत हुआ कहाँ कब हमें न प्यारा?॥

बस, युद्धमात्र को छोड़कर कहाँ नहीं है हम सदय।
फिर एक बार हे विश्व! तुम गाओ भारत की विजय॥ ३॥

कारणवश हमें क्रोध कुछ हो आता है।
अवनि और आकाश प्रकम्पित हो जाता है॥
यही हाथ वह कठिन कार्य कर दिखलाता है।
स्वयं शौर्य भी जिसे देखकर सकुचाता है॥
हम धीर वीर गम्भीर हैं, है हमको कौन भय ?
फिर एक बार हे विश्व ! तुम गाओ भारत की विजय॥४॥

—सियारामशरण गुप्त

प्रश्न

१—भारतवासियों के वीरता के काया का वर्णन करो।
२—कौन-कौन गुण मुख्यतः भारतीयों में पाए जाते हैं ?
३—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और वाक्यों में उनका प्रयोग करो—
जग में गूँज रहे हैं, शौर्य, साक्षी, कायरता, प्रकम्पित करना, सुरपति, सदय, अवनि, सकुचाना और गम्भीर।
४—निम्न-लिखित वाक्यों में सहायक क्रियाएँ बताओ—
(क) संसार में हमारे गीत अब भी गूँज रहे हैं।
(ख) हम इन्द्र तक का हृदय कम्पायमान कर चुके हैं।

√४०—तिब्बत की कुछ बातें

व्यापार और कारीगरी—तिब्बत का व्यापार अधिकतर भारतवर्ष से होता है। उससे कम रूस और चीन से होता है। भारतवर्ष में तिब्बत से ऊन अधिक

अंश में आता है। इसके अतिरिक्त कस्तूरी, चँवर (याक की पूँछ) और चमड़ा भी आता है। कुछ अन्य वस्तुएँ भी थोड़े-थोड़े अंश में आती हैं। ऊन कई हजार खच्चरों पर लदकर दार्जिलिंग जाता है। कुछ कुछ नेपाल, भूटान और लद्दाख को जाता है।

मुश्क का व्यापार यहाँ अधिक होता है। मुश्क एक प्रकार के हिरन के शरीर से निकलता है। वह बिल्ली से तिगुना बड़ा होता है और भूरे रंग का होता है। उसके मुँह में दो छोटे-छोटे दाँत होते हैं, जो हाथी के दाँतों की भाँति मुँह के ऊपरी भाग से बाहर निकले रहते हैं। मुश्क नर हिरन की एक थैली से निकलता है, जो उसके पिछले भाग में होती है। उस थैली के विषय में यह कहा जाता है कि वह चन्द्रमा की कलाओं के घटने-बढ़ने के अनुसार घटती-बढ़ती रहती है। इस कारण शिकारी लोग उस मृग को आधे मास के लगभग मारते हैं।

लासा तिब्बत की राजधानी है। वहाँ के अरण्यों में शिकार करने का बिलकुल निषेध है; क्योंकि लासा बड़ा पवित्र स्थान माना गया है। तिब्बत में मुश्क बहुत सस्ता और शुद्ध मिलता है। तिब्बती लोग मुश्क को काँच के दाने, लोहे के बर्तन, चाकू, मिठाई इत्यादि

वस्तुओं के बदले में दे देते हैं। वहाँ से मुश्क चीन को अधिक जाता है और वहाँ से जापान को जाता है।

वहाँ के एक विशेष प्रकार के मृग का रुधिरमय सींग भी चीन में बहुत बिकता है। इस सींग में जमा हुआ रुधिर भरा रहता है। उससे वहाँ के वैद्य बड़ी बल-दायक ओषधि बनाते है। ऐसे सींगों की एक जोड़ी का मूल्य ५०० येन तक होता है। ऐसे सींगोंवाला मृग घोड़े के बराबर ऊँचा होता है; किन्तु आकार मृग का ही होता है। उसका सींग चैत्र मास में निकलना आरम्भ होता है। आषाढ़-सावन में उसमें कुछ कठोरता आ जाती है। मार्गशीर्ष मास में वह परिपक्क अवस्था में पहुँच जाता है और माघ में वह झड़कर गिर जाता है। उस सींग की लम्बाई १३ इंच के लगभग होती है।

उस मृग के शिकार में यह आवश्यक होता है कि वह एक ही गोली से मर जाय, यदि वह केवल घायल ही होकर रह जाता है, तो वह अपना मस्तक वृक्षों से रगड़-रगड़कर अपने सींगों को तोड़ डालता है। वह मृग स्वयं भी अपने सींगों की रक्षा करता है। आषाढ़-सावन में वह उनकी रक्षा के हेतु घने जंगलों को छोड़कर ऐसे स्थानों पर चला जाता है, जहाँ वृक्ष नहीं होते, ताकि वृक्षों की शाखाओं में उलझने के

कारण सींग कहीं टूट न जायँ। शिकारी को भी उसी समय उस पर आघात करने का अच्छा अवसर प्राप्त होता है।

तिब्बत से नेपाल को अन्न, चँवर, नमक, शोरा इत्यादि वस्तुएँ आती है। चीन और मंगोलिया के प्रदेशों में भी ऊन यहाँ से जाता है। भारतवर्ष से वहाँ रेशमी वस्त्र, कलाबत्तू के कामदार कपड़े, रेशमी डोरे, श्वेत सूती कपड़े, अनाज, बर्तन इत्यादि बहुत जाते हैं। चीन से रेशम, मूँगा और चाय तिब्बत को बहुत जाती है। जो तिब्बती निर्धन होते हैं और चाय मोल नहीं ले सकते, वे अमीरों की उपयोग की हुई चाय की पत्तियों को खरीद लेते हैं। काश्मीर और नेपाल से लाल फीरोजा बहुत जाता है। उसे स्त्रियाँ बहुत पसन्द करती हैं।

कपड़े की बिक्री में यहाँ किसी प्रकार के गज से काम नहीं लिया जाता। खरीदार अपने बालिश्त या हाथ से कपड़ा नापता है और उसी हिसाब से मूल्य दे देता है। यदि खरीदार लम्बा मनुष्य है, तो उसके बालिश्त और हाथ भी लम्बे होंगे, उस समय बेचनेवाले को हानि हो जाती है। जो कपड़ा बाहर से आता है, उसकी नाप चौड़ाई (अर्ज़) के हिसाब से ही हो जाती है। वहाँ के व्यापार

मूल्य से २०, २५ प्रति सैकड़ा अधिक नफा लेते हैं। इसी कारण उनमें कपट अधिक होता है।

वहाँ एक ऐसी प्रथा चली आती है कि जब कभी कोई मनुष्य व्यापारी से कोई वस्तु खरीद लेता है, तो व्यापारी उसको आशीर्वाद देता है और कहता है—"तुमने जो सामान मोल लिया है, ईश्वर करे वह तुम्हारे रोग और दुःख का हरण करे; इसको मोल लेने से तुम भाग्यशाली बनो और धनवान् हो और हमसे बहुत-बहुत माल खरीदो।"

खरीदार को भी इस समय एक तमाशा करना पड़ता है। जब वह बेचनेवाले को दाम देने लगता है, तो वह मैले रुपए को अपनी जीभ से चाटता है, हाथ में लेकर अपनी गर्दन के कपड़े से पोंछता है और तब वह उसे व्यापारी के हाथ में देता है। उस समय वह ऐसी दृष्टि बनाता है कि मानों उसे उनके छूटने से बड़ा सन्ताप हो रहा है। रुपए के चाटने और पोंछने का अर्थ यह है कि उनमें जो कुछ सौभाग्य था, वह सब खरीदार ने चाट-पोंछ लिया और व्यापारी के लिए उनमें कुछ नहीं रह गया। यह रीति अब कम होती जा रही है।

यहाँ लामा पुरोहित बड़ा व्यापार करते हैं। सरकार स्वयं व्यापारी है और दलालों और ठेकेदारों द्वारा

काम करती है। सभी लोग कुछ न कुछ व्यापार किया करते हैं। एक किसान भी कुछ व्यापार करता है। जब शीतकाल में शीत अधिक पड़ता है, तो ये लोग खारी झीलों से नमक लाकर जमा करते हैं और उसे नेपाल, भूटान, सिक्कम आदि स्थानों में जाकर बेचते हैं।

रोगी की सेवा—तिब्बत में रोगी की सेवा करना स्त्रियों का काम है। परन्तु वैद्यों के विचित्र विश्वासों के कारण सेवा का काम बहुत बढ जाता है। तिब्बत के वैद्य रोगी को दिन में सोने नहीं देते। इसलिए सेवा करनेवालों के लिए रोगी को जगाए रखना भी एक बड़ा काम है। रोगी को लेटने नहीं दिया जाता। किसी वस्तु के सहारे उसे बैठे रहना पड़ता है। कई स्त्रियाँ रोगी के पास उसको सहायता देने के लिए बैठी रहती हैं, जिसमें सबसे आवश्यक काम उसको सोने न देने का है। ये स्त्रियाँ लगातार उसकी देखरेख करती रहती हैं। इसलिए उनको शीघ्र-शीघ्र बदलना पड़ता है। ये स्त्रियाँ रोगी को प्रसन्न रखने, उसको सन्तुष्ट करने और उसके कमरे को स्वच्छ रखने में बड़ी प्रवीण होती हैं।

सबसे कठिन और आवश्यक काम रोगी को जगाने का है। उसके लिए स्त्रियाँ अपने पास ठंढा पानी

और उसके छिड़कने की एक लकड़ी रख लेती हैं। ज्यों ही रोगी को नींद आई, त्यों ही वे उस पर पानी छिड़क देती हैं, जिससे उसकी नींद जाती रहती है। यदि पानी से नींद नहीं जाती, तो वे रोगी को हिलाती हैं और नाम ले-लेकर पुकारकर जगाती हैं। रोगी इस काम से दुःखी न होकर बहुत प्रसन्न होता है और कृतज्ञता प्रकट करता है; क्योंकि वह जानता है कि वे वैद्य के आदेश से और उसके भले के लिए ही ऐसा कर रही हैं।

तिब्बतवालों का यह दृढ़ विश्वास है कि दिन में सोना बुरा है। जो मिलनेवाले भी आते है, वे भी सबसे पहले यही कहते हैं "दिन में सोना नहीं चाहिए।" जब कोई रोगी मर जाता है, तो पड़ोसी अथवा लोगों का यही विश्वास होता है कि स्त्रियों ने उस पर पूरी-पूरी दृष्टि न रक्खी होगी और रोगी दिन में सो गया होगा, इसी से उसकी मृत्यु हो गई।

मैंने इसकी खोज भी की कि दिन में सोने न देने की यह अद्भुत रीति कहाँ से चली। परन्तु ठीक-ठीक पता नहीं चला कि बात क्या है। शायद कोई बीमारी तिब्बत में ऐसी होती हो कि यदि रोगी सो जाय, तो उसका ज्वर बढ़ जाता है। प्रत्येक बीमारी के लिए यह

एक ही अद्भुत चिकित्सा ठीक नहीं हो सकती। सम्भव है, किसी ऐसे ही कारणों से यह रीति प्रचलित हो गई हो। मैं जब कभी बीमार पड़ता था, तो भर नींद सोता था; परन्तु मुझे कभी कोई हानि नहीं पहुँची।

तिब्बत में चिकित्सा-शास्त्र पर उतना विश्वास नहीं है, जितना कि वहाँ की मूढता पर। उन लोगों का विश्वास है कि रोग किसी राक्षस अथवा दुष्टात्मा के द्वारा मनुष्य-शरीर में आता है। इसलिए पहले शरीर से उस दुष्टात्मा को निकाल देना चाहिए, तब किसी वैद्य की शरण जाने से लाभ होगा। रोगी को पहले-पहल एक लामा आकर देखता है और अपनी पुस्तक से देखकर बतलाता है कि कौनसा राक्षस अथवा दुष्टात्मा उसके शरीर में प्रवेश कर गया है। पहले उसी के निकालने का उद्योग किया जाता है।

जो लामा राक्षस को रोगी के शरीर से निकाल देता है, वही डाक्टर का भी निर्णय करता है। इस भाँति चिकित्सा आरम्भ होती है। जो बात लामा कहते हैं, उसको रोगी के घरवाले अक्षर-अक्षर मानने के लिए तैयार रहते है। यदि लामा कह दे कि पाँच दिन तक रोगी को कोई ओषधि न देनी चाहिए, तो रोगी को कदापि ओषधि न मिलेगी। यदि रोगी को

उचित समय पर औषधि मिल जाय, तो वह बच भी सकता है; परन्तु ऐसी अवस्था में यदि वह मर भी जाय, तो लामा महाशय पर कोई दोष नहीं लगाया जा सकता, इसके विपरीत उसका और भी मान बढ़ता है; क्योंकि उसने पहले से ही समझ लिया था कि रोगी नहीं बचेगा, तभी तो औषधि का निषेध कर दिया था।

वास्तव में तिब्बत के वैद्य इस पदवी के योग्य नहीं हैं। वे लोग दस-बीस औषधियों के नाममात्र जानने के सिवाय और कुछ भी नहीं जानते। बाप, दादों, परदादों से केवल नाम ही याद करते चले आते हैं।

यदि कोई मुझसे पूछे, तो मैं तो यही कहूँगा कि रोगी को तिब्बत के वैद्य के हवाले न करके उसको ईश्वर के ही भरोसे छोड़ दे, तो वह अवश्य ही अच्छा हो जायगा।

"तिब्बत में तीन वर्ष" से

प्रश्न

१—तिब्बत भारतवर्ष के किस ओर है, और हमारे देश का कौनसा प्रान्त तिब्बत से मिला हुआ है?

२—तिब्बत से क्या क्या वस्तुएँ भारतवर्ष को आती हैं?

३—मुश्क कैसे पैदा होती है? मुश्क के मृग को शिकारी आधे मास के लगभग क्यों मारते हैं?

४—तिब्बत के वैद्य रोगी का किस प्रकार इलाज करते हैं ?

५—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उनका वाक्यों मे प्रयोग करो—

कला, परिपक्व, फ़ीरोज़ा, प्रथा, प्रवीण, आदेश, कृतज्ञता, चिकित्सा, मूढ़ता और निषेध।

६—इस पाठ में जो-जो सहायक क्रियाएँ आई हैं, उन्हें बताओ।

७—निम्न-लिखित वाक्यों में रिक्त स्थान पर कर्म या पूरक जोड़ो—

(१) तिब्बत से—अन्न, शोरा इत्यादि वस्तुएँ आती हैं।

(२) वे अमीरों की उपयोग की हुई चाय की—लेते है।

८—निम्न-लिखित संयुक्त क्रियाओं को वाक्यों मे प्रयोग करो—

बढ़ती रहती है, भरा रहता है, पहुँच जाता है, ले सकते है।

४१—लक्ष्मण का स्वाभिमान

तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप, उठै न चलहिं लजाय।
मनहु पाय भट बाहुबल, अधिक अधिक गरुआय॥

श्रीहत भये हारि हिय राजा।
बैठे निज निज जाइ समाजा॥ १॥
नृपन बिलोकि जनक अकुलाने।

बोले वचन रोष जनु साने ॥ २ ॥
द्वीप द्वीप के भूपति नाना ।
आए सुनि हम जो प्रण ठाना ॥ ३ ॥
देव दनुज धरि मनुज शरीरा ।
विपुल वीर आए रणधीरा ॥ ४ ॥
कहहु काहि यह लाभ न भावा ।
काहु न शंकरचाप चढ़ावा ॥ ५ ॥
रहा चढाउब तोरब भाई ।
तिल भर भूमि न सके छुड़ाई ॥ ६ ॥
अब जनि कोउ भाषे भट मानी ।
वीर-विहीन मही मैं जानी ॥ ७ ॥
तजहु आश निज निज गृह जाहू ।
लिखा न विधि वैदेहि विवाहू ॥ ८ ॥
सुकृत जाइ जो प्रण परिहरहूँ ।
कुँवरि कुमारि रहै का करहूँ ॥ ९ ॥
जो जनतेउँ विनु भट महि भाई ।
तौ प्रण करि करतेउँ न हँसाई ॥ १० ॥
जनक वचन सुनि सब नरनारी ।
देखि जानकी भए दुखारी ॥ ११ ॥
भाषे लषण कुटिल भइ भौंहैं ।
रदपुट फरकत नयन रिसौंहैं ॥ १२ ॥

कहि न सकत रघुवीर डर, लगे बचन जनु बाण।
नाइ राम-पद कमल शिर, बोले गिरा प्रमाण॥

रघुबंसिन महँ जहँ कोउ होई।
तेहि समाज अस कहहि न कोई॥ १॥
कही जनक जस अनुचित बानी।
विद्यमान रघुकुलमणि जानी॥ २॥
सुनहु भानु-कुल पंकज भानू।
कहौं स्वभाव न कछु अभिमानू॥ ३॥
जो राउर अनुशासन पाऊँ।
कन्दुक इव ब्रह्माण्ड उठाऊँ॥ ४॥
काचे घट जिमि डारौं फोरी।
सकौं मेरु मूलक इव तोरी॥ ५॥
तव प्रताप महिमा भगवाना।
का बापुरो पिनाक पुराना॥ ६॥
नाथ जानि अस आयसु होऊ।
कौतुक करौं विलोकिय सोऊ॥ ७॥
कमल-नाल जिमि चाप चढावों।
शत योजन प्रमाण लै धावों॥ ८॥

तोरौं छत्रकदण्ड जिमि, तव प्रताप बल नाथ।
जो न करौं प्रभुपद सपथ, पुनि न धरौं धनु हाथ॥

—तुलसीदास

प्रश्न

१—राजा जनक ने 'वीर-विहीन मही मैं जानी' क्यों कहा ?
२—'तमकि......गरुआय' दोहे का अर्थ करो।
३—लक्ष्मण को क्रोध क्यों आया और फिर उन्होंने क्या किया ?
४—वीर पुरुषों के क्या लक्षण हैं ?
५—निम्न-लिखित शब्दों के क्या अर्थ हैं—
श्रीहत, रदपुट, प्रताप, पिनाक, छत्रकदण्ड।
६—निम्न-लिखित क्रियाओं के प्रेरणार्थक रूप बनाओ—
उठना, कहना, देखना और तोड़ना।

४२—खोज

ज्ञान की प्राप्ति बड़ी तपस्या का फल होता है। अज्ञान का पर्दा हटाने में और छिपे हुए ज्ञान की ज्योति देखने में बड़े-बड़े मनुष्यों ने सारा जीवन ही बिता दिया है। बहुत से मनुष्य जीवन भर परिश्रम करते-करते हार जाते हैं और कोई-कोई भाग्यवान् तो अपने जीवन में अपने परिश्रम का फल देख भी लेते हैं। बड़े-बड़े आविष्कारों की कथा यदि देखी जाय, तो बहुधा यह देखने में आया है कि वे बड़े-बड़े आविष्कार एक बहुत ही साधारण बात के देखने और विचारने से हुए हैं।

न्यूटन संसार में बहुत बड़ा गणितज्ञ हो चुका है। जितने सिद्धान्त उसने निकाले, उनमें एक बड़ा सिद्धान्त यह है कि पृथ्वी में सब वस्तुओं को अपनी ओर खींचने की शक्ति है। इतना बड़ा सिद्धान्त उसने एक दिन एक फल को वृक्ष से झड़ते और गिरते देखने से निकाला। उसके पहले कितने ही लोगों ने पेड़ों से फल गिरते देखे होंगे; किन्तु किसी के भी विचार में कोई सिद्धान्त न आया। न्यूटन के चित्त में ही झट यह प्रश्न पैदा हुआ कि यह फल नीचे क्यों गिरा, ऊपर को क्यों न चला गया, या किसी अन्य दिशा को क्यों न गया।

बस, इतनी छोटी बात ने एक गम्भीर प्रश्न पैदा कर दिया और उसके चित्त में अनेक विचार पैदा होने लगे। एक विचार ने दूसरे विचारों को जगाया। विचारों की लड़ें उत्पन्न हो गईं। फिर क्या था, न्यूटन अपने ही विचार-समुद्र में ग़ोते खाने लगा। बहुत समय तक परिश्रम करने के बाद न्यूटन ने संसार के सामने यह सिद्ध कर दिया कि पृथ्वी में एक अजीब और बड़ी बलवती आकर्षण शक्ति है, और इसी से पृथ्वी, सूर्य और अनेक नक्षत्र अपने-अपने चक्करों में बँधे हुए बराबर घूमते रहते हैं।

हम लोग नित्य वृक्षों को छोटे से बड़ा होते देखते हैं। उन्हें एक बार हरे-भरे होते और फिर सूखते हुए भी देखते हैं, किन्तु किसी के चित्त में यह विचार नहीं पैदा हुआ कि यह सब क्यों होता है। यह प्रश्न हमारे भारत के प्रख्यात वैज्ञानिक डाक्टर जगदीशचन्द्र बोस महोदय के मन में उत्पन्न हुआ।

वह इस विचार की सिद्धि में लग गए कि वृक्षों और पौदों में भी मनुष्यों की भाँति प्राण होते हैं। उनकी उत्पत्ति, जीवन और मरण अन्य प्राणियों की भाँति ही होता है। उन्हें कई वर्ष लगातार इस पर परिश्रम करना पड़ा। कितनी बार उनके प्रयत्न निष्फल हुए। कई बार निराशा ने उनको घेरा; किन्तु धैर्य उन्होंने कभी न छोड़ा। वह अपने परिश्रम में लगे रहे और अन्त में उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि सब जन्तुओं और वृक्षों में एक से ही प्राण हैं।

सन् १५१० ईस्वी में एक ग़रीब फ़ांसीसी के गृह में एक बालक 'बर्नार्ड पैलीसी' का जन्म हुआ। उसका पिता अपना जीवन काँच की छोटी-छोटी वस्तुएँ बनाकर बेचने में व्यतीत करता था। उसके पास बहुत साधारण साधन थे और इसी तरह दीनता से अपना पालन करता था। बर्नार्ड पैलीसी कुछ बड़ा होने पर अपने

पिता की सहायता करने लगा। वह धीरे-धीरे काँच पर रंग-बिरंगी चित्रकारी करना सीख गया, जिससे पिता को बड़ा सन्तोष हुआ।

निर्धनता के कारण पैलीसी को किसी स्कूल में शिक्षा न मिल सकी। इस कारण उसे बिना किसी स्कूल कॉलेज में ज्ञान प्राप्त किए संसार-सागर में प्रवेश करना पड़ा। कुछ-कुछ पिता की सहायता से लिखना-पढ़ना उसने सीख लिया था और इतना ही उसके लिए काफी समझा गया। पैलीसी भी अपने पिता की भाँति काँच की वस्तुएँ बनाने और उन पर चित्रकारी करके जीवन व्यतीत करने लगा।

एक दिन एक धनवान् मनुष्य के यहाँ काम करते समय उसने प्राचीन काल का बना हुआ एक मिट्टी का बर्तन देखा, जिस पर एक प्रकार की चमकदार पक्की कलई, जिसे अँगरेजी में "इनेमिल" कहते हैं, चढ़ी हुई थी। उसे देखकर उसका चित्त बड़ा ही प्रसन्न हुआ; क्योंकि कलई बड़ी सुन्दरता से चढ़ी हुई थी, जिसके कारण वह साधारण मिट्टी का पात्र बड़ा मूल्यवान् हो गया था। आजकल वैसी कलई के भाँति-भाँति के बर्तन बाजार में बहुत कम मूल्य में मिलते हैं। एक निकम्मे टीन पर भी यदि वह कलई कर दी जाती है;

तो वही टीन सुन्दर वन जाता है और वड़ा उपयोगी हो जाता है।

पैलीसी के चित्त में यह भावना उत्पन्न हुई कि यदि उसे उस कलई का मसाला ज्ञात हो जाता, और उसके लगाने की विधि का पता चल जाता, तो उसका भाग्य विल-कुल पलट जाता, और संसार को भी इस ज्ञान से वड़ा लाभ हो जाता; किन्तु यह सब उसे कौन वतलाता ?

पैलीसी अब इसकी खोज में लग गया। उसने स्थान-स्थान पर जाकर तरह-तरह की मिट्टियों की जाँच आरम्भ की कि उन पर कलई बैठ सकती है या नहीं। फिर अपने अन्दाज से भाँति-भाँति के मसाले वनाने आरम्भ किए। अब उसने नाना प्रकार की मिट्टियों के बर्तन तय्यार करवाए, उन पर अलग-अलग मसाले लगाना आरम्भ किया और फिर उनको भट्टी में पकने के लिए रख दिया। आँच पर रखने के उपरान्त पैलीसी घंटों बैठा रहता; किन्तु अन्त में वहुत से फूट जाते, वहुतों का रंग जल जाता, वहुत विगड़ जाते और वहुत वैसे ही रह जाते थे।

इस धुन में लगने के कारण वह अपना काम, जिससे वह अपने और अपने कुटुम्ब को पालता था, वहुत कम कर सकता था। उसकी स्त्री को अब चिन्ता होने लगी।

विभिन्न प्रकार के मसाले बनाने में, अलग-अलग किस्म के मिट्टी के बर्तन तय्यार करवाने में और सबसे अधिक बर्तनों को आँच पर पकाने के लिए लकड़ियाँ लाने में बड़ा धन लग जाता था, किन्तु अन्त में वह सब परिश्रम निरर्थक हो जाता था।

कुछ समय तक तो उसकी स्त्री ने कुछ न कहा, किन्तु अन्त में उससे न रहा गया और उसने पैलीसी से यह कहा कि निर्धनता बढ़ती जा रही है, और जीवन का निभना कठिन होता जाता है। इस धन्धे से तो अपना पुराना ही धन्धा ठीक था, जिसमें पेट तो भर जाता था; किन्तु अब तो जो कुछ थोड़ी-सी सम्पत्ति थी, वह भी जाती रही। इसलिए आप इस धुन को छोड़कर अपना पुराना कार्य कीजिए, जिससे जीवन चल सके।

पैलीसी ने स्त्री के वचन चुपचाप सुन लिये। उसने जाना कि इन वचनों में सत्यता तो अवश्य है, किन्तु हिम्मत हारना कायरता का लक्षण है। क्या मालूम, किस समय कार्य में सिद्धि हो जाय? जब-जब उसको जीवन चलाना बिलकुल कठिन पड़ जाता, तो वह अपना पुराना कार्य कुछ समय करके कुछ धन एकत्रित करता और फिर उसी अपनी धुन में लग

जाता, और सब संचित धन फिर नष्ट कर देता।

उसका निर्धन और दीन दशा में ऐसी चोटें खाना कोई साधारण बात न थी। किस समय तक वह चोटें खाए और अपनी दुराशा को कायम रक्खे और अपनी निर्धनता बढ़ाता रहे, यह प्रश्न सदा उपस्थित रहता था; किन्तु उसका एक वीर हृदय था। उसने यह निश्चय कर लिया था कि या तो कार्य सिद्ध करूँगा, अन्यथा उसकी खोज में अपने प्राण अर्पित करूँगा।

दिन से मास बीतते गए और मास से वर्ष। १० वर्ष चले गए; परन्तु दुराशा का आशा में बदलने का कोई चिह्न नहीं दिखाई देता था। उसका वीर हृदय अब थकने लगा, सन्देह पैदा होने लगे और चित्त में यह विचार उत्पन्न होने लगे कि अब कब तक कष्ट और दारिद्र्य सहन किया जा सकता है। अब शरीर की सहन-शक्ति कम हो चली थी, मित्रवर्ग के ताने सदा उस पर होते रहते थे।

बहुत-से अब उसे पागल ही समझते थे और हँसते थे। किन्तु जब-जब उसके मन में इस प्रकार की निर्बलता उत्पन्न होती थी, तब-तब उसकी आत्मा उससे यह कहती थी "देख, क्या मालूम आशा का फल तेरे निकट ही आ पहुँचा हो, ऐसा न हो जाय कि तू इतने

कष्ट से ज्ञान के द्वार पर पहुँचकर मूर्खतावश लौट जाय।"

इन विचारों ने उसे फिर साहसी बनायां और उसने मिट्टी के बर्तनों के टुकड़ों में फिर तरह-तरह के मसाले लगाकर उन्हें एक दिन अपने एक मित्र की काँच पिघलानेवाली बड़ी भट्टी में पकने को रख दिया। इस भट्टा की आँच पैलीसी की अपनी भट्टियों से बहुत तेज थी और उसने अन्त में यह देखा कि इस आँच का परिणाम कुछ आशा उत्पन्न करनेवाला हुआ है; क्योंकि एक मिट्टी के टुकड़े में उसे रंग की कुछ चमक दिखाई दी।

अब उसको यह विदित हुआ कि शायद वह ठीक आँच बर्तनों पर नहीं पहुँचा सका है, और इसी कारण वह असफल हुआ है। परन्तु भट्टी बनवाना और आँच का प्रबन्ध करना उसके लिए कोई साधारण बात न थी और फिर यह सब करने पर भी आशा क्या थी? वह अब संकट में पड़ गया। चित्त अब चंचल हो उठा। विचार करते-करते उसने ठाना कि अन्तिमबार फिर एक प्रयत्न करूँ और अपना सर्वस्व ही इस प्रयत्न में लगा दूँ।

धन का अभाव उसे फिर कष्ट देने लगा। ईंटें खरीदने और उनको ढुलवाने और भट्टी बनवाने में

धन ही की आवश्यकता थी। उसने ईंटें किसी प्रकार खरीदीं और अपने सिर पर टोकरी रखकर उन्हें ढोना और अपने हाथ से ही भट्टी का बनाना भी आरम्भ किया। जब वह तय्यार हो गई, तब जलाने की लकड़ी इकट्ठा करने की कठिनता आई। उसने अपने अन्दाज की लकड़ी भी जमा की।

अब उसने भाँति-भाँति की मिट्टी के बर्तन और प्रायः ३०० प्रकार के अलग-अलग मसाले तय्यार किए और अब पैलीसी रात-दिन उन मसालों को अलग-अलग मिट्टी के बर्तनों के टुकड़ों पर लगाता गया और सबको अलग-अलग कागज पर लिखता गया। जब वह कार्य समाप्त हो गया, तब वे सब पात्र भट्टी के भीतर ठीक-ठीक स्थान पर रख दिए गए और नीचे से आग लगाई गई। उसके जीवन में वह क्षण बड़े महत्त्व का था। अग्निदेव के हाथ में अब उसकी लाज थी और उन्हीं के पूजन में अब वह लगा हुआ था।

एक आसन पर बैठे हुए उसको दिन-रात एक होने लगी। अपने तृषित नेत्रों से वह कभी अपने पात्रों को देखता, कभी अग्नि को प्रज्वलित करता और फिर इस आशा में बैठ जाता कि पात्रों पर पुता हुआ रंग अग्नि से पिघलकर कब निर्मल बनता है। नींद और भूख सब जाती

रही। उसकी स्त्री ने उसकी यह दशा देखकर उससे भोजन के लिए चलने को कहा, किन्तु उसने वह स्थान छोड़ना पसन्द न किया। अन्त में उसके लिए दूध में पका हुआ कुछ दलिया उसके पुत्र के हाथ उसके पास वहीं भेज दिया गया। इस बार वह इस खोज में अपने शरीर को ही अर्पण करने का संकल्प कर चुका था। कोई उसके पास ऐसा आदमी नहीं था, जो उसकी सहायता करता। नित्य सुबह होती और शाम होती थी, किन्तु मिट्टी पर लगे मसाले नहीं पिघलते थे।

एक दिन लकड़ी झोंकते-झोंकते उसने देखा कि लकड़ियाँ समाप्त हो चुकी हैं और आँच भी कुछ कम हो चली है। अब क्या हो, जल्दी बाहर जाकर वह इधर-उधर दौड़ा और अन्त में कुछ न देखकर अपने घर के सामने लगी हुई बाड़ी की लकड़ियाँ उखाड़कर ले आया और अग्निदेव को समर्पित करने में लग गया। वह भी चुक गई; किन्तु अब भी आशा दुराशा रही। पैलीसी की चिन्ता अब बढ़ने लगी। क्या किया जाय, कुछ समझ में नहीं आया।

कुछ देर बैठे रहने के उपरान्त वह एकदम उठा और दौड़कर उस कमरे में गया, जहाँ उसकी स्त्री और बालक रहते थे। चारों ओर दृष्टि दौड़ाई। एक ओर

उसे कुर्सी रक्खी दिखाई दी। तुरन्त जाकर उसे उठा लिया और अपनी भट्टी की ओर दौड़ गया। उसने वहाँ कुर्सी तोड़ी और उसकी लकड़ियाँ भट्टी में झोंक दी, वह भी भस्म हो गई। कुर्सी के बाद मेज और मेज के बाद अन्य लकड़ी की वस्तुएँ एक एक करके सब अग्नि के समर्पित होती गईं।

निदान कमरे में कोई लकड़ी का सामान न रहा। जो कुछ वस्तुएँ थीं, वे सब स्वाहा हो चुकी थीं; परन्तु मसाला पिघलने पर नहीं आया, वह पुनः अपने कमरे की ओर दौड गया। दृष्टि नीचे डालने पर उसने देखा कि कमरे की जमीन पर लकड़ी के तख्ते जड़े हुए हैं। एक तख्ते के बाद दूसरा तख्ता उखाड़ता गया और भट्टी में स्वाहा करता गया। वह उस समय उन्मत्त की भाँति था। अब कमरे के कुल तख्ते उखड़ गये थे और वह एकाग्र होकर अग्निदेव की पूजा में स्वाहा-स्वाहा के मंत्र पढ़ रहा था।

जब वह तन्मय होकर टकटकी बाँधे हुए बैठा था, उसे यह ज्ञात होने लगा कि अज्ञान का पर्दा हटने लगा है और उसके मसाले का ऊपरी अंश पिघलकर नीचे जाने लगा है। पैलीसी ने आँखें बन्दकर ईश्वर को धन्यवाद दिया, और जब उसने उन मिट्टी के

बर्तनों के टुकड़ों को अन्त में बाहर निकाला, तो देखा कि मसाला ऊपर से बह गया है, और नीचे का रंग खूब स्वच्छ निर्मल कान्ति लिए हुए निकल आया है, जिसके दर्शनों के लिए उसके नयन इतने वर्षों से तृषित हो रहे थे। उसकी खोज अब सफल हुई और संसार में उसकी कीर्ति सदा के लिए फैल गई।

बालको! पैलीसी की तपस्या असाधारण थी। उसे एक मास तक बराबर भट्टी की ज्वाला के सामने बैठकर अपनी देह को सुखाना पड़ा था। उसके शरीर का पसीना शरीर में ही सूखता रहता था और कपड़े बदलकर दूसरे कपड़े पहनने की भी उसे सुध नहीं रही थी। उसे घर का सामान सब अपने हाथों अग्नि में भस्म करना पड़ा था। यही नहीं, अपना शरीर और अपना सर्वस्व लगा देने पर उसे बाहर अनेक पुरुषों के ताने सहन करने पड़े थे। उसे कोई ऐसा मनुष्य नहीं मिला था, जो थोड़ी सहायता या थोड़ी सहानुभूति के शब्द भी प्रकट करता। किन्तु उसकी भीतरी प्रबल आत्मा उसकी सहायक थी, और ईश्वर पर उसका भरोसा था। यही उसकी सिद्धि के मूल थे। उसका जीवन सदा के लिए वीरता, सहनशीलता, गम्भीरता और संकल्प की दृढ़ता का चमकता हुआ दृष्टान्त है।

प्रश्न

१—न्यूटन के हृदय में आरम्भ में क्या विचार उत्पन्न हुआ था, जिससे उसने आकर्षण का सिद्धान्त निकाला ?

२—जगदीशचन्द्र बोस ने क्या खोज की है ?

३—पैलीसी ने क्या आविष्कार किया और उसे इस खोज में क्या-क्या कष्ट उठाने पड़े ?

४—निम्न-लिखित शब्दों और पदों के अर्थ बताओ और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—

आविष्कार, गम्भीर, साधन, भावना, जीवन निभना, कायरता, अर्पित करना, अन्यथा, परिणाम, ठाना, अभाव, महत्त्व, तृषित, एकाग्र होना, तन्मय होना, कान्ति और सहानुभूति ।

५—निम्न-लिखित वाक्य में जो-जो संज्ञाएँ आई हैं, उनके प्रकार, लिङ्ग, वचन तथा कारक बताओ—

बालको ! पैलीसी की तपस्या असाधारण थी; क्योंकि उसे एक माह तक बराबर भट्टी की ज्वाला के सामने बैठकर अपनी देह को सुखाना पड़ा था ।

४३—कबीर की साखी

गुरु गोविन्द दोऊ खड़े, काके लागूँ पाँय ।
बलिहारी गुरु आपने, जिन गोविन्द दिया बताय ॥ १ ॥
यह तन विष की बेलरी, गुरु अमृत की खान ।

महात्मा कबीरदास

सीस दिये जो गुरु मिलै, तौ भी सस्ता जान ॥ २ ॥
ऐसा कोई ना मिला, सत्त नाम का मीत ।
तन मन सौंपे मिरग ज्यौं, सुनै वधिक का गीत ॥ ३ ॥
दुख में सुमिरन सब करैं, सुख में करै न कोय ।
जो सुख में सुमिरन करै, तो दुख काहे होय ॥ ४ ॥
माला तो कर में फिरै, जीभ फिरै मुख माँहि ।
मनुवाँ तो चहुँदिस फिरै, यह तो सुमिरन नाहिं ॥ ५ ॥
कबीर गर्व न कीजिए, काल गहे कर केस ।
ना जानौं कित मारिहै, क्या घर क्या परदेश ॥ ६ ॥
झूठे सुख को सुख कहैं, मानत है मन मोद ।
जगत चबेना काल का, कुछ मुख में कुछ गोद ॥ ७ ॥
पानी केरा बुदबुदा, अस मानुष की जात ।
देखत ही छिप जायगी, ज्यों तारा परभात ॥ ८ ॥
रात गँवाई सोय करि, दिवस गँवायो खाय ।
हीरा जन्म अमोल था, कौड़ी बदले जाय ॥ ९ ॥
काल करे सो आज कर, आज करे सो अब्ब ।
पल में परलै होयगी, बहुरि करेगा कब्ब ॥ १० ॥
माटी कहे कुम्हार से, तू क्या रूँदै मोहिं ।
इक दिन ऐसा होयगा, मैं रूँदूँगी तोहिं ॥ ११ ॥
आये हैं सो जायँगे, राजा रंक फकीर ।
एक सिंघासन चढ़ि चले, एक बँधे जंजीर ॥ १२ ॥

या दुनिया में आयके, छाँड़ि देइ तू ऐंठ।
लेना हो सो लेइ ले, उठी जात है पैंठ॥ १३॥

प्रश्न

१—गोविन्द से गुरु को क्यों बड़ा कहा है?

२—इन शब्दों के शुद्ध रूप लिखो—

मीत, मिरग, सुमिरन, परभात, अब्र और केस।

३—निम्न-लिखित पदों व शब्दों के अर्थ बताओ और वाक्यों मे उनका प्रयोग करो—

बधिक, परभात, रंग और 'उठी जात है पैंठ'।

४—इस पाठ के १२वें दोहे में जो-जो सर्वनाम आए हैं उनके प्रकार, लिङ्ग, वचन तथा कारक बताओ।

५—सुख और दुख कैसी संज्ञाएँ हैं? इनके विशेषण के रूप बनाओ।

४४—राजकुमार का घर लौटना

जब राजकुमार भलीभाँति विद्या सीख चुके तब आचार्यों ने घर जाने की आज्ञा दी। राजा ने शुभ दिन देखकर बहुत-से घोड़े, हाथी, रथ और पदचर के साथ बलाहक नाम सेनापति को विद्यालय में भेजा। राजकुमार को देखने के लिए, और अनेक राजा भी बलाहक के साथ गए।

सेनापति भीतर जाकर राजकुमार को प्रणाम कर हाथ जोड़कर बोला—"युवराज! महाराज की आज्ञा

है कि अब हमारा अभीष्ट सिद्ध हुआ। तुम सम्पूर्ण विद्या सीख चुके। अध्यापकों ने घर जाने की आज्ञा दे दी है। प्रजा और गृह के लोग तुम्हारे दर्शन की बड़ी अभिलाषा रखते हैं। इसलिए हमारी इच्छा है कि 'तुम आकर उन लोगों को दर्शन दो। ब्राह्मण का सत्कार, मानी लोगों का मान, प्रजारूपी पुत्रों का पालन और बान्धववर्ग को सुखी करो।' आपके चढ़ने के लिए महाराज ने पारस देश के अधिपति का भेजा हुआ, समुद्र से प्राप्त, वायु और गरुड़ के समान तेज चलनेवाला सम्पूर्ण लक्षणों से युक्त रत्नस्वरूप इन्द्रायुध नाम का घोड़ा भेजा है। वह द्वार पर बँधा है। यदि आज्ञा हो, तो ले आऊँ। अनेक राजा लोग भी आपके दर्शन को बाहर खड़े हैं।"

बलाहक की यह बात सुनकर राजकुमार ने इन्द्रायुध को लाने की आज्ञा दी। तुरन्त एक हृष्टपुष्ट तेजस्वी और महावेगशाली घोड़ा सामने आया। उसका बल ऐसा था कि यद्यपि मनुष्य दोनों ओर से उसकी रास पकड़े थे; परन्तु जिस समय वह बिगड़ता था, उसका मुँह नीचे नहीं कर सकते थे। वह ऊँचा इतना था कि सबसे लम्बे मनुष्य का भी हाथ उसकी पीठ तक नहीं पहुँच सकता था।

चन्द्रापीड़ ने इस अनुपम अश्व को देखकर बड़ा आश्चर्य माना और वह मन में चिन्ता करने लगे कि देवताओं और राक्षसों ने समुद्रमथन करके क्या रत्न पाया ? यदि इन्द्र इस घोड़े पर न चढ़े, तो उनका त्रैलोक्य-राज्य निष्फल है। समुद्र ने उनको एक सामान्य उच्चैःश्रवा देकर टरका दिया। यदि गदाधर एक बार इसको देख पाए, तो फिर उनको गरुड़ पर चढ़ने का अभिमान न रहे। पिता हमारे कैसे प्रतापी हैं कि त्रिभुवन में दुर्लभ रत्न भी उन्होंने एकत्र किया है। इसका रूप और लक्षण देखने से ज्ञात होता है कि यह अद्वितीय अश्व है। ऐसा जान पड़ता है कि किसी महात्मा के शापवश इसने अश्व का रूप धारण किया है।

इस प्रकार अनेक चिन्ता करके वह आसन से उठ और घोड़े के निकट जाकर मन में नमस्कार कर तथा चढ़ने के अपराध को क्षमा माँगकर उसकी पीठ पर सवारी करके विद्यालय से बाहर हुए। वहाँ जो राजा लोग खड़े थे कुमार के मुखचन्द्र के देखने ही से कृतार्थ हुए और सब धीरे-धीरे निकट आए। बलाहक ने एक-एक का नाम-ग्राम बतलाकर परिचय कराया और राजपुत्र ने उनका मधुर सम्भाषणपूर्वक सम्मान किया और अनेक प्रकार के वार्तालाप करते हुए, वे

नगर की ओर चले। वन्दीजन उत्तमरूप से कीर्ति-गान करते थे। चाकर लोग कोई चँवर झुलाता था और कोई छाता लगाए था। वैशम्पायन भी एक घोड़े पर चढ़ राजकुमार के पीछे-पीछे चले।

चन्द्रापीड़ चलते-चलते नगर के मध्यस्थित पथ पर पहुँचे। नगर के लोग अपना-अपना काम छोड़ करके उनका मुखकमल देखने लगे। नगर के सब द्वार खुले रहने से यह बोध होता था कि नगर राजकुमार को कोटिनयन से अवलोकन करता है। कुमार के आने का संवाद सुनकर सब स्त्रियाँ गिरती-पड़ती, जो जैसे बैठी थीं, उठ धाईं। राजकुमार की परम मोहिनी मूर्ति देखकर वे परस्पर कहने लगीं कि हे सखी, ऐसा अनुपम पुरुष तो कहीं देखने में नहीं आया। जान पड़ता है, ब्रह्मा ने चन्द्रमा का अंश निकालकर इसी को बनाया है। यद्यपि राजकुमार क्षणमात्र में उनके नेत्रों से अदृश्य हो गए; परन्तु उनके हृदयों में राजकुमार ने सदा के लिए स्थान पा लिया। जब राजकुमार राज-भवन के समीप पहुँचे, तब पुर की कुलवधुओं ने फूलों की वर्षा की भाँति उनके मस्तक पर अक्षत चन्दन की वर्षा की।

कुमार क्रमशः द्वार पर पहुँचे और घोड़े से उतरे और

बलाहक मार्ग दिखाता हुआ आगे चला। वैशम्पायन भी कुँवर का हाथ पकड़े पीछे-पीछे चले, तो क्या देखते हैं कि सैकड़ों पहलवान अस्त्र-शस्त्र बाँधे द्वार पर खड़े हैं। भीतर कहीं धनुष, बाण, तलवार आदि शस्त्र परिपूर्ण अस्त्रशाला; कहीं घोड़े, गज, सिंह, व्याघ्र इत्यादि भयंकर पशुओं से भरी हुई पशुशाला; कहीं सुन्दर-सुन्दर अश्वों की अश्वशाला; कहीं कोकिल, राजहंस, चातक, मोर, शुक आदि मनोहर पक्षियों की पक्षिशाला; कहीं वेणु, वीणा, मृदंग आदि की संगीतशाला और कहीं विचित्र चित्रों की चित्रशाला बनी है। कहीं परम सुन्दर बगीचे शोभित हैं और उनके मध्य में सरोवर के तट में फुहारे छूट रहे हैं। बड़े-बड़े आचार्य, नीतिज्ञ लोग अपने-अपने स्थानों पर बैठे विचार कर रहे हैं। अतिथि लोग नानाप्रकार के रत्नों से विभूषित सभामण्डप में बैठे हैं। कहीं-कहीं नर्तक नाच रहे हैं। जलचर जीव आनन्द से इधर-उधर भ्रमण कर रहे हैं। बालक मोर और मोरनी से खेल रहे हैं और हिरन और हिरनी मनुष्य के देखने से भयभीत होकर घर के चारों ओर घूम रहे हैं।

छः ड्योढ़ियों को पारकर सात के भीतर प्रवेश करके वह महाराज की सभा के निकट पहुँचे। महल की स्त्रियाँ

राजकुमार को देखकर मङ्गलगान करने लगीं। राजा उस समय एक शय्या पर पौढ़े थे और सेजपाल लोग अस्त्र बाँधे पहरा दे रहे थे। द्वारपाल ने कहा—महाराज, देखिए! राजा ने ये वाक्य सुनकर दृष्टि फेरी और वैशम्पायन से युक्त चन्द्रापीड़ को देखकर वह बड़े आनन्दित हुए और हाथ बढ़ाकर पुत्र को अङ्ग से लगाकर, बैठने की आज्ञा दी। थोड़े समय के बाद राजकुमार माता के सन्निकट गए। उन्होंने स्नेहमय प्रफुल्ल नयनों से पुत्र को बारम्बार देखकर ललाट और मुख का चुम्बन करके अपनी गोदी में बैठाया और प्रेममय मधुर वचन से बोली—"बेटा, तुमको अनेक विद्यासम्पन्न देखकर हमारे नयन और मन दोनों तृप्त हुए। अब वधू के मुख देखने की लालसा मन में लगी है।"

—गदाधरसिंह

(कादम्बरी से, किञ्चित् परिवर्तित)

प्रश्न

१—इस पाठ की भाषा में औरों की भाषा से क्या विशेषता है?

२—राजकुमार का घोड़ा कैसा था, उसमें क्या गुण थे?

३—राजकुमार के नगर-प्रवेश का वर्णन करो?

४—राजकुमार की यात्रा अपने को राजकुमार मानकर वर्णन करो।

५--संक्षेप में बतलाओ कि प्राचीन काल मे भारतवर्ष में शिक्षा किस प्रकार दी जाती थी।

६—निम्न-लिखित शब्दों व पदों के अर्थ बताओ और उनका वाक्यों में प्रयोग करो—

अभीष्ट, बान्धववर्ग, अनुपम, निष्फल, हृदय के अचल अतिथि, आलिङ्गन करना, तृप्त होना और लालसा।

७--निम्न-लिखित वाक्य में विशेषणों के प्रकार बताओ--

त्रिभुवन मे दुर्लभ रत्न भी उन्होंने एकत्र किया है।

शब्दार्थ और टिप्पणियाँ

१—प्रार्थना

अधार=सहारा । सुखदायक=आनन्द देनेवाले। प्रतिपाल=पालन करनेवाला, रक्षक। अतिशय=अत्यन्त। बिसारे=भूले हुए। शान्तिनिकेतन=शांति का घर। प्रेमनिधे=स्नेह की खान।

२—कपटी मित्र

अकस्मात्=एकाएक। मनोरथ=मन की इच्छा।

३—जन्मभूमि

मोद=आनन्द। भिदा=मिला है। संकटों=कष्टों। छटा=शोभा। कृतघ्नी=किए हुए उपकार को न मानने-वाला। मान=प्रतिष्ठा। सत्कर्म=अच्छे कर्म।

४—ध्रुव

अहंकार=घमंड। छिदा हुआ=(हृदय में) चुभे हुए। कल्याण=हित, भलाई। पराक्रम=शक्ति, पुरुषार्थ।

५—महानदी

नीर=जल। तट=किनारा। उज्ज्वल=स्वच्छ। भँवर=पानी का चक्कर। वक्षःस्थल=छाती। धीवर=मल्लाह। मीन=मछली। विलीन=लुप्त। विस्तृत=फैला हुआ। भीषण=भयंकर। विचरते=टहलते। श्रम=थकावट। उग्र=प्रचंड। अमित=अन्यन्त।

६–विद्या

यथार्थ=ठीक । प्रकाश=ज्ञान । प्रतिष्ठा=मान । अवलोकना=देखना । अपावन=अपवित्र । कञ्चन=सोना ।

७–प्रेम-मन्त्र

उचारो=बोलो । द्वेष=वैर । मृदुल=कोमल । पारस्परिक=आपस का । रज्जु=रस्सी । ब्रह्माण्ड=अखिल सृष्टि ।

८–शिष्टाचार

शिष्टाचार=सभ्य व्यवहार । सिद्धान्त=मत । प्रतीक्षा=इन्तज़ार । उपरान्त=पीछे । स्तुति=प्रशंसा । अतिरिक्त=अलावा ।

९–मधुमक्खी

अनुराग=प्रेम । विवेक=ज्ञान । उष्ण=गर्म । भ्रष्ट=नष्ट । धाम=घर । सार=तत्त्व ।

१०–भीम की वीरता

पात्र=वे मनुष्य जिनका नाटक में ज़िक्र होता है । मल्ल-युद्ध=एक विशेष प्रकार का युद्ध, जिसमें दो आदमी एक दूसरे से लड़ते हैं ; कुश्ती ।

११–मीठी बोली

पत्थर को मोम बनानेवाली=कठोर से कठोर हृदय को भी कोमल बनानेवाली । जी में...धोनेवाली=हृदय के बुरे भाव को नष्ट करनेवाली । काई=मैल । लाली=शोभा । अनूठी=अनुपम ; अद्भुत ।

१२—जल और वायु

भस्म=राख। स्मरण=याद। व्यय=खर्च।

१३—धीर नर

विपद्=कष्ट। पौरुष=बल, शक्ति। समर-भूमि=युद्ध-क्षेत्र। अरि=शत्रु। धूल चटाना=नीचा दिखलाना। धरा-धाम=पृथ्वीरूपी घर। धवल=सफ़ेद। गज=हाथी। दशन=दाँत। भीरु=डरपोक; कायर। अत्याचारी=दुराचारी। धुरन्धर=श्रेष्ठ। कौमुदी=चाँदनी। अशन=भोजन।

१४—बॉय-स्काउट संस्था

समुदाय=झुण्ड। समारोह=धूमधाम। मान-मर्यादा=प्रतिष्ठा।

१५—दशहरा

मग=मार्ग। विमल=स्वच्छ। ललाम=सुन्दर। खञ्जन=एक छोटा पक्षी। पर्व=त्योहार। प्रस्रवण=एक पर्वत का नाम। प्रतिबिम्ब=चित्र। अत्र=यहाँ।

१६—पाताल-प्रविष्ट पांपियाई नगर

रमणीय=सुन्दर। विभूषित=सजा हुआ। निवारण=दूर करना। सुसज्जित=भली भाँति सजा हुआ। शिखर=चोटी। अंकित थे=लिखे थे। कुंजें=लताएं। पथिक=राहगीर। अजूबा=अनोखी।

१७—अछूत की आह

द्विज=ब्राह्मण। मज्जा=हड्डी के भीतर का गूदा। अपावन=अपवित्र। दयानिधि=करुणा के सागर।

१८-रानी दुर्गावती

निपुण=चतुर । पराक्रमी=शक्तिशाली । परिणाम=फल; नतीजा । मोर्चा=सुरक्षित स्थान, जहाँ से लड़ाई हो सकती है; जंग ।

१६-स्वर्गीय संगीत

निराश=हताश । अर्थ=कारण । उपयुक्त=योग्य ; ठीक । सुयोग=अच्छा मौक़ा । प्रशस्त=सुन्दर; चौड़ा । अवलम्बन=सहारा । वांछित=इच्छित । अलभ्य=न मिलनेवाला । निष्क्रिय=चेष्टाहीन ।

२०-अतिथि-सत्कार

वैभव=ऐश्वर्य; धन । परिचायक=बतानेवाले । आतिथ्य=पहुनाई । वंचित=अलग ।

२१-फूल और काँटा

वसन=वस्त्र । श्याम=काला । सुरसीस=देवताओं के सिर ।

२२-जलवर्षक वृक्ष

रोम=बाल । झुलसना=मुरझाना । निवेदन=प्रार्थना ।

२३-भारत-माता

अतिशय=अत्यन्त । पुञ्ज=ढेर; समूह । सौरभ=सुगन्ध । वारी=न्यौछावर । दिव्य=अलौकिक । लोकमान्य=संसार में प्रतिष्ठित ।

२४-ज्ञान के लिए बलिदान

सदृश=समान । रुचि=इच्छा । सहनशीलता=सहन करने की शक्ति ।

२५—सुसङ्ग और कुसङ्ग

पद्मपत्र=कमल का पत्ता। छवि=शोभा। पङ्कज=कमल। पामर=नीच। मानस=मनुष्य। क्षुद्र=नीच। अनल=आग। तिक्त=कड़ुआ। गरिमा=बड़ाई।

२६—ध्यान

तिरस्कार=निरादर। प्रत्यञ्चा=डोरी। वत्स=पुत्र।

२७—प्रणवीर अर्जुन

अच्युत=अविनाशी; कृष्ण। धनञ्जय=अर्जुन। विसारना=भूलना। अपवर्ग=मोक्ष। आराधना=प्रार्थना। बद्ध=बंधा हुआ।

२८—आजकल का स्थल-युद्ध

विकट=कठिन। व्योमयान=हवाई जहाज़। चेष्टा=उपाय। उड़नखटोलों=हवाई जहाज़ों। प्राणघातक=प्राणों को नष्ट करनेवाले।

२९—सदुपदेश

उदधि=समुद्र। तोय-पानी। अतोल=अतुल; बहुत। जलद=मेघ। जलेश=समुद्र। कदली=केला। अहि=सर्प। विकसै=खिलता है। ताये=गरम किए हुए। संसर्ग=सम्बन्ध।

३०—समुद्र-यात्रा

रोमाञ्च=रोओं का खड़ा हो जाना। प्रतीत=ज्ञात। रसातल=पाताल। प्रस्तुत=तैयार, उपस्थित। जोखिम=खतरा। दृष्टिगोचर=दिखलाई देना। परिचय=जानकारी।

३१–ग्राम-गुण-गान

नागरिक=नगर का रहनेवाला। अवलोकन=देखना। अपार=अत्यन्त । कृषक=किसान । रसाल=आम । मकरन्द=पुष्परस । हुलसाना=प्रसन्न होना । ग्रामाधिप=गांव का मुखिया । विस्तार=फैलाव ।

३२–हैज़ा (विशूचिका)

संक्रामक=छूत से फैलनेवाला। सूक्ष्म=बहुत छोटा। जलाशय=तालाव, पोखरा । अंश=छोटा हिस्सा ।

३३–स्वार्थी

स्वार्थी=अपना काम चाहनेवाला, मतलबी। ऊसर=अन-उपजाऊ ज़मीन। कूटनीति=कपट की चाल। तर्क=युक्ति, दलील। दनुज=राक्षस। उत्पात झगड़ा। विषधर=सर्प। अगम=कठिन।

३४–एक जापानी की वीरता

अध्यक्ष=प्रधान । जगद्विख्यात=संसारप्रसिद्ध । जंगी-जहाज़=लड़ाई के जहाज़ । लक्ष्य=निशाना । प्रत्युत्तर में=बदले में । दुर्ग=किला । आपदाओं=कठिनाइयों । धरा-तल=पृथ्वी । उत्तमोत्तम=श्रेष्ठ से श्रेष्ठ ।

३५–परमेश्वर की लीला

सृष्टी=संसार। सुघराई=सुन्दरता, चतुराई । ललित=सुन्दर। सरोवर=तालाव। रजनी=रात्रि। लरजना=हिलना, डुलना। सञ्चार=प्रवेश। अपरम्पार=अनन्त ।

३६—स्वामी दयानन्द सरस्वती

तीव्र=तेज। असारता=तुच्छता। प्रभाव=असर। भाष्य=टीका। अनुकरणीय=ग्रहण करने योग्य।

३७—प्रकृति

छटा=शोभा। व्योम=आकाश। चाप=धनुष। कुसुम्भी=कुसुम की तरह लाल। वृन्द=समूह। पांथ=पथिक, यात्री। शावक=पशुओं के छोटे बच्चे। भूधर=पर्वत। यथाकाल=ठीक समय।

३८—परीक्षा

उषा=तड़का, प्रातःकाल। धत्=लत्। धर्मनिष्ठता=धर्म पर विश्वास। पदच्युत=पद से अलग होना। निर्णय=फ़ैसला। सहमी हुई=डरी हुई। कोर्ट=खेल का मैदान। सहानुभूति=हमदर्दी। उत्सुक=इच्छुक। सङ्कल्प=दृढ़ विचार।

३९—भारत-विजय

शौर्य=पराक्रम। साक्षी=गवाह। कायरता=डरपोकपन। प्रकम्पित=कम्पायमान। सुरपति=इन्द्र। दलित=नष्ट। सदय=दयावान्। अवनि=पृथ्वी। गंभीर=शान्त।

४०—तिब्बत की कुछ बातें

अरण्य=जंगल। निषेध=मनाही। परिपक्व=खूब पका हुआ, प्रौढ़। आघात=प्रहार। फ़ीरोज़ा=एक बहुमूल्य पत्थर; रत्न। प्रथा=रीति। प्रवीण=चतुर। आदेश=आज्ञानुसार। चिकित्सा=इलाज।

४१–लक्ष्मण का स्वाभिमान

तमकि=क्रोध के आवेश में आकर। गरुआय=भारी होता जाता था। श्रीहत=शोभा से रहित। अकुलाना=घबराना। बिलोकि=देखकर। भाषे=कहा। वैदेहि=सीता। सुकृत=शुभ कर्म; पुण्य। भट=वीर, योधा। कुटिल=टेढ़ी। रदपुट=होंठ। गिरा=वाणी। विद्यमान=उपस्थित। अनुशासन=आज्ञा। कन्दुक=गेंद। पिनाक=शिवजी के धनुष् का नाम। छत्रक=कुकुरमुत्ता।

४२–खोज

आविष्कार=खोज। आकर्षण=खिंचाव। भावना=इच्छा। धुन=प्रबल इच्छा। साधन=उपाय। संचित=इकट्ठा किया हुआ। संकट=कष्ट। निदान=अन्त में। उन्मत्त=पागल। एकाग्र=एकचित्त। तन्मय=लीलीन। तृषित=प्यासे। दृष्टान्त=उदाहरण।

४३–कबीर की साखी

मिरग=मृग। बधिक=हत्यारा। बुदबुदा=पानी का बुला। रंक=दीन। पैंठ=बाज़ार।

४४–राजकुमार का घर लौटना

पदचर=पैदल चलनेवाला सिपाही, प्यादा। अभीष्ट=चाहा हुआ; ध्येय। अनुपम=अनोखा। आरोहण=चढ़ना। क्रमशः=धीरे-धीरे। लालसा=इच्छा।